योगविद्या

वर्ष 5 अंक 4
अप्रैल 2016
सदस्यता डाकखर्च – रु 100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2016

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 64 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर फोटो : बाल योग दिवस, मुंगेर, 2016

अन्दर के रंगीन फोटो : 1 & 8: बसंत पंचमी, 2016; 2: श्री स्वामी सत्यानन्द; 3: स्वामी निरंजनानन्द; 4-5: नव वर्ष कार्यक्रम, 2016; 6-7: बाल योग दिवस, 2016

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

साहसी बनो!

कायरता या भीरुता मनुष्य की कमजोरी की परिचायक है। जिस प्रकार लज्जा से मनुष्य दबता है, उसी प्रकार कायरता से भी दबना पड़ता है। कायर व्यक्ति समाज-सेवा या साहसिक कार्यों के लिए अयोग्य सिद्ध होता है। वह अपने जीवन में कभी सफल नहीं बन सकता।

भय अनेक रूप धारण कर प्रकट होता है। राजा को शत्रुओं का, पण्डित को वादी का, सुन्दरी को वृद्धावस्था का, वकील को न्यायाधीश का, स्त्री को पति का, विद्यार्थी को शिक्षक का, मेंढक को सर्प का और सर्प को नेवले का डर सदा बना रहता है। केवल ज्ञानी, पूर्ण योगी और भक्त ही निर्भय होकर विचरते हैं। जिस प्रकार क्रोध को जीत लेने से आधी साधना पूर्ण हो जाती है, उसी प्रकार भय पर विजय पाने से शेष आधी साधना भी पूरी हो जाती है।

–श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर-811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद-121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

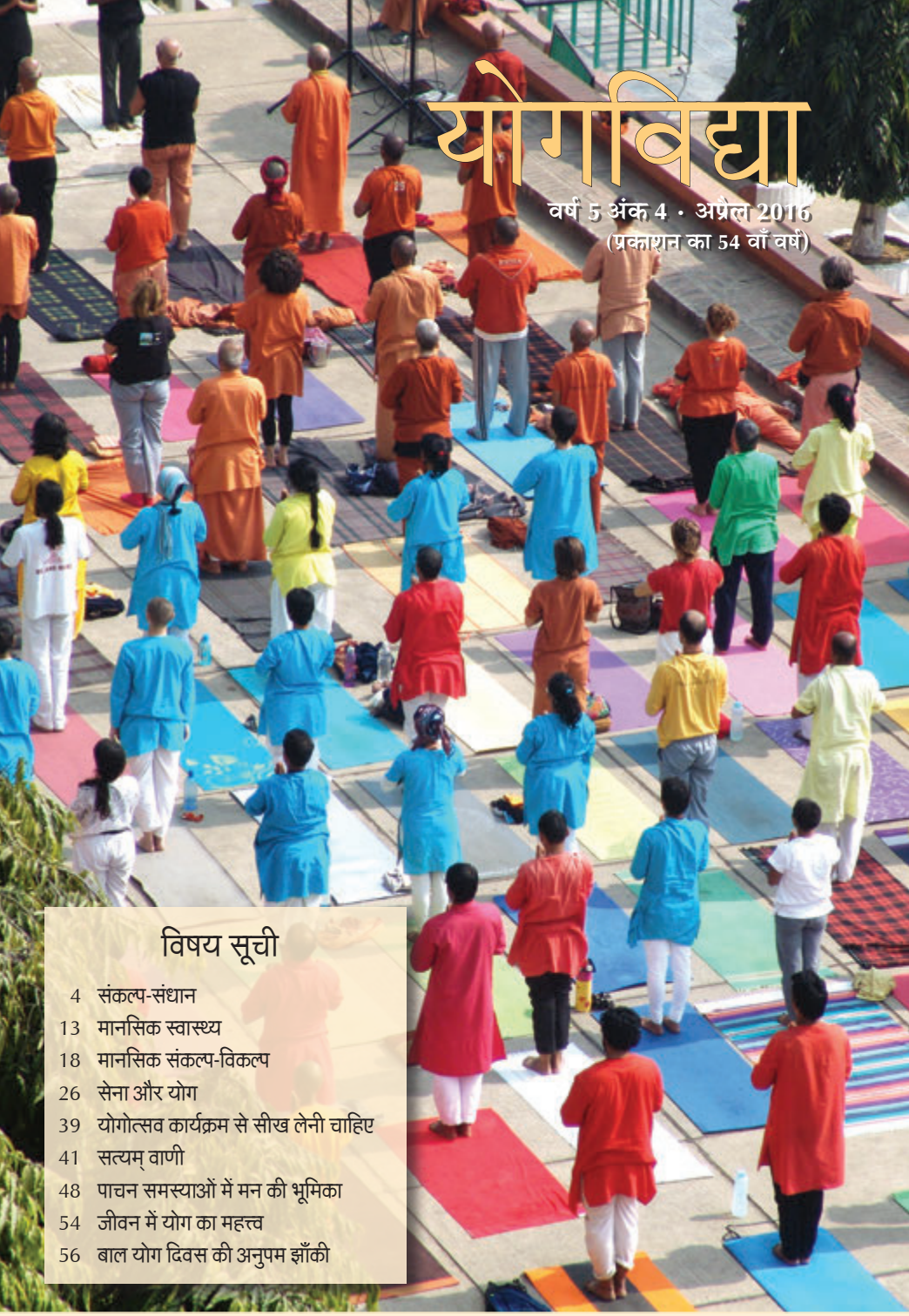

योगविद्या

वर्ष 5 अंक 4 • अप्रैल 2016
(प्रकाशन का 54 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 संकल्प-संधान
13 मानसिक स्वास्थ्य
18 मानसिक संकल्प-विकल्प
26 सेना और योग
39 योगोत्सव कार्यक्रम से सीख लेनी चाहिए
41 सत्यम् वाणी
48 पाचन समस्याओं में मन की भूमिका
54 जीवन में योग का महत्त्व
56 बाल योग दिवस की अनुपम झाँकी

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

संकल्प-संधान

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमारे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने 53 वर्ष पूर्व बिहार योग विद्यालय में अखण्ड ज्योति को प्रज्ज्वलित किया था और तब से यह अखण्ड ज्योति योग विद्या का प्रतीक बनकर इस आश्रम में सदैव जल रही है। उसी क्षण को याद करते हुए आज हमलोग गुरु आवाहन के मंत्रों के साथ एक और छोटी-सी ज्योति को यहाँ पर प्रज्ज्वलित करेंगे और उसके पश्चात् इस ज्योति का स्थानांतरण होगा। सन् 1963 में ज्योति प्रज्ज्वलन के पश्चात् हमारे गुरुजी ने जो संकल्प बिहार योग विद्यालय की स्थापना के समय लिया था, उसे यहाँ पर आज पुन: पढ़ा जायेगा। वही प्रार्थना इस आश्रम और मिशन का संकल्प है।

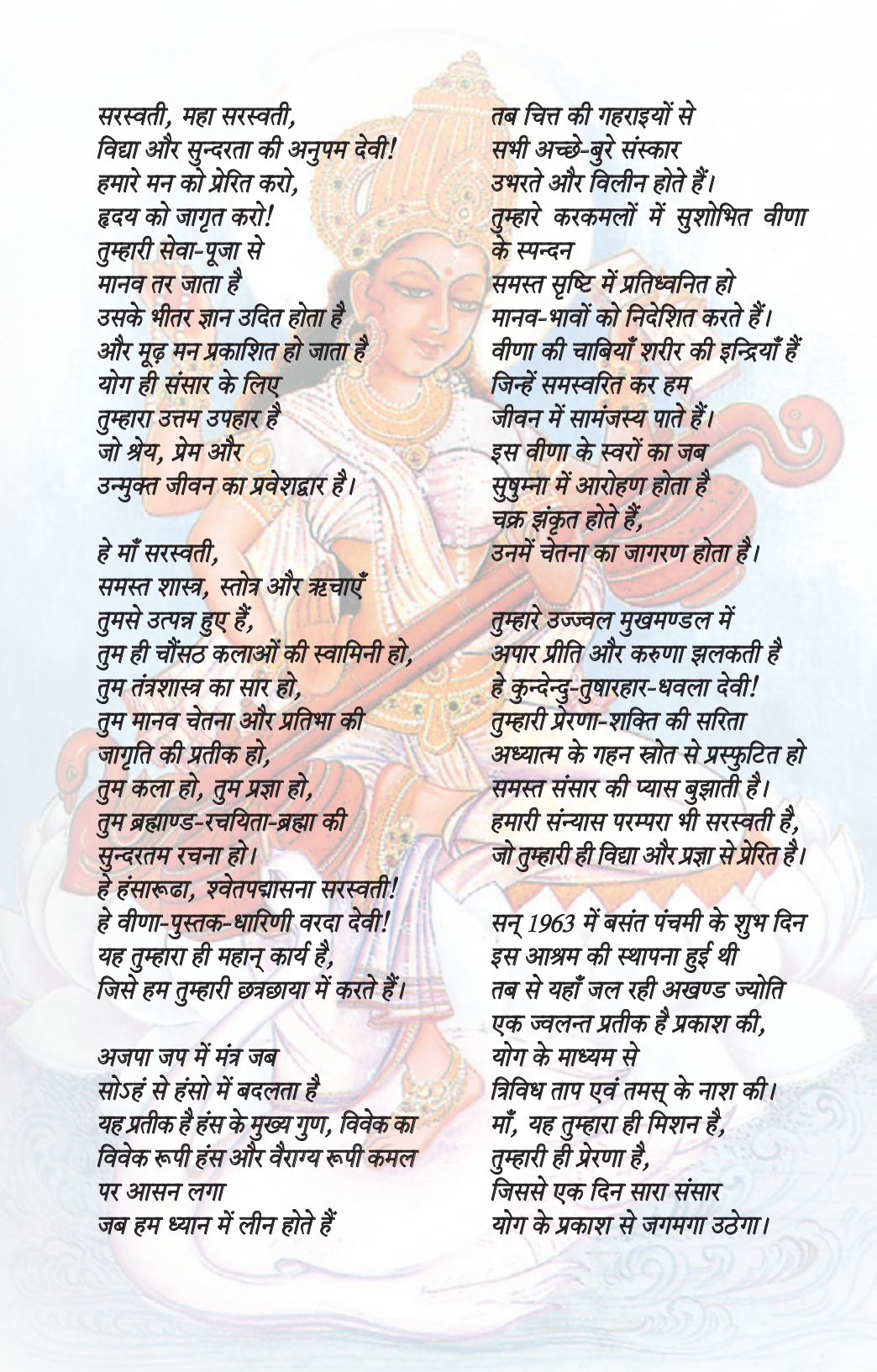

सरस्वती, महा सरस्वती,
विद्या और सुन्दरता की अनुपम देवी!
हमारे मन को प्रेरित करो,
हृदय को जागृत करो!
तुम्हारी सेवा-पूजा से
मानव तर जाता है
उसके भीतर ज्ञान उदित होता है
और मूढ़ मन प्रकाशित हो जाता है
योग ही संसार के लिए
तुम्हारा उत्तम उपहार है
जो श्रेय, प्रेम और
उन्मुक्त जीवन का प्रवेशद्वार है।

हे माँ सरस्वती,
समस्त शास्त्र, स्तोत्र और ऋचाएँ
तुमसे उत्पन्न हुए हैं,
तुम ही चौंसठ कलाओं की स्वामिनी हो,
तुम तंत्रशास्त्र का सार हो,
तुम मानव चेतना और प्रतिभा की
जागृति की प्रतीक हो,
तुम कला हो, तुम प्रज्ञा हो,
तुम ब्रह्माण्ड-रचयिता-ब्रह्मा की
सुन्दरतम रचना हो।
हे हंसारूढा, श्वेतपद्मासना सरस्वती!
हे वीणा-पुस्तक-धारिणी वरदा देवी!
यह तुम्हारा ही महान् कार्य है,
जिसे हम तुम्हारी छत्रछाया में करते हैं।

अजपा जप में मंत्र जब
सोऽहं से हंसो में बदलता है
यह प्रतीक है हंस के मुख्य गुण, विवेक का
विवेक रूपी हंस और वैराग्य रूपी कमल
पर आसन लगा
जब हम ध्यान में लीन होते हैं
तब चित्त की गहराइयों से
सभी अच्छे-बुरे संस्कार
उभरते और विलीन होते हैं।
तुम्हारे करकमलों में सुशोभित वीणा
के स्पन्दन
समस्त सृष्टि में प्रतिध्वनित हो
मानव-भावों को निदेशित करते हैं।
वीणा की चाबियाँ शरीर की इन्द्रियाँ हैं
जिन्हें समस्वरित कर हम
जीवन में सामंजस्य पाते हैं।
इस वीणा के स्वरों का जब
सुषुम्ना में आरोहण होता है
चक्र झंकृत होते हैं,
उनमें चेतना का जागरण होता है।

तुम्हारे उज्ज्वल मुखमण्डल में
अपार प्रीति और करुणा झलकती है
हे कुन्देन्दु-तुषारहार-धवला देवी!
तुम्हारी प्रेरणा-शक्ति की सरिता
अध्यात्म के गहन स्रोत से प्रस्फुटित हो
समस्त संसार की प्यास बुझाती है।
हमारी संन्यास परम्परा भी सरस्वती है,
जो तुम्हारी ही विद्या और प्रज्ञा से प्रेरित है।

सन् 1963 में बसंत पंचमी के शुभ दिन
इस आश्रम की स्थापना हुई थी
तब से यहाँ जल रही अखण्ड ज्योति
एक ज्वलन्त प्रतीक है प्रकाश की,
योग के माध्यम से
त्रिविध ताप एवं तमस् के नाश की।
माँ, यह तुम्हारा ही मिशन है,
तुम्हारी ही प्रेरणा है,
जिससे एक दिन सारा संसार
योग के प्रकाश से जगमगा उठेगा।

यह संकल्प योग विद्या के उत्थान एवं प्रचार हेतु समर्पित है और यही इस आश्रम का लक्ष्य तथा प्रयोजन भी है। यह आश्रम योग शिक्षा केन्द्र नहीं, बल्कि योग विद्या संवर्धन केन्द्र है जहाँ योग में शोध करके, योग को विकसित करके प्रचार के लिये व्यवस्था की जाती है। पूरे भारत में बिहार योग विद्यालय ही एक ऐसी संस्था है जो योग के नवीनतम अभ्यासों, आयामों और अंगों को समाज के सामने प्रस्तुत कर रही है। भारत में तो सैकड़ों संत-महात्मा, विद्वान्, योगी, साधु-संन्यासी और योग केन्द्र हैं। साथ ही योग के कॉलेज और विश्वविद्यालय भी हैं, लेकिन उन सभी स्थानों में योग के शारीरिक पक्ष को ही प्रधानता प्रदान की जा रही है। योग के विभिन्न अंगों से लोग केवल बौद्धिक रूप से परिचित हैं, लेकिन योग का अभ्यास कैसे करना है, उससे उपलब्धि क्या होती है, अनुभव क्या होता है, जागृति कैसे होती है, उत्थान कैसे होता है, यह कोई नहीं जानता।

हमारे गुरु, स्वामी सत्यानन्द जी अपने गुरु, स्वामी शिवानन्द जी के आदेश से योग विद्या के प्रचार हेतु ऋषिकेश से सन् 1956 में निकल पड़े थे और अनेक वर्षों तक उन्होंने भारत में भ्रमण करके लोगों की आवश्यकता को जानने-समझने का प्रयास किया। जब उन्हें यह ज्ञात हो गया, तब उस मुताबिक योग विद्या को आध्यात्मिक धरातल से वैज्ञानिक, व्यावहारिक धरातल पर ले आये और इसके प्रचार-प्रसार का कार्य आरम्भ किया। आज इस संस्था द्वारा योग-प्रचार के 53 साल बीत चुके हैं। सन् 2013 में हमलोगों ने बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती मनाई। उस दौरान मुंगेर में विश्व योग सम्मेलन आयोजित हुआ जिसमें विश्व के बीस हजार से अधिक प्रतिनिधि शामिल थे। उस समय यह आभास हुआ था कि जिस संकल्प को लेकर श्री स्वामीजी ने योग के क्षेत्र में पहला कदम रखा था वह संकल्प पूरा हो गया है। वह संकल्प था प्रचार का, और अभी तक योग विद्या का जो प्रचार हुआ, वह समाज की आवश्यकता के अनुरूप हुआ।

योग का वास्तविक लक्ष्य

योग एक विशाल शास्त्र है, विद्या है, विज्ञान है, जिसका प्रयोजन मात्र शारीरिक स्वास्थ्य नहीं, बल्कि जीवन में ऊर्जा और चेतना की जागृति है। जब चेतना और ऊर्जा की जागृति होती है तब व्यक्तित्व निखरता है और योग शिक्षा का यही उद्देश्य, यही प्रयोजन स्वामी शिवानन्द जी ने अपने शिष्यों को दिया था। उन्होंने कहा था, 'योग सिखाते समय याद रखना कि यह मोक्ष और समाधि का साधन नहीं है, बल्कि उस सामान्य व्यक्ति के लिये है जो संसार में संलग्न है। जो ब्रह्मचर्य आश्रम में हैं, जो गृहस्थ आश्रम में हैं और जो वानप्रस्थ आश्रम में हैं, उनके लिये योग समाधि का साधन नहीं, बल्कि उनके लिये योग का प्रयोजन है जीवन की व्यावहारिक प्रतिभा से मनुष्य को जोड़ना ताकि वह जीवन में सफल और सुखी हो सके।'

हमारे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने स्वामी शिवानन्द जी के आदेशानुसार मुंगेर में आकर योग प्रचार आरम्भ किया तो उसे पूर्ण वैज्ञानिक और व्यावहारिक तरीके से किया। जब तक उन्होंने योग का प्रचार किया, न धर्म के बारे में कभी कहा, न ईश्वर के बारे, बल्कि योग की व्यावहारिकता और वैज्ञानिकता को ही सामने रखा। जब योग एक विज्ञान के रूप में विश्वमान्य हो गया, तब श्री स्वामीजी क्षेत्र-संन्यास लेकर संस्था का त्याग करके निकल गए अपने अगले पड़ाव की ओर, क्योंकि एक संन्यासी के लिये आश्रम या योग प्रचार अन्तिम पड़ाव नहीं है।

हम अभी संन्यासी नहीं हैं, हम प्रयासरत हैं संन्यास को अपने जीवन में सिद्ध करने के लिये। अभी हम विद्यार्थी हैं इस आध्यात्मिक, यौगिक और संन्यास जीवन के। संसार में और आश्रम में कोई पहुँचा हुआ नहीं है, सब विद्यार्थी हैं। कोई आगे है तो कोई पीछे, लेकिन सभी मार्ग पर चल रहे हैं एक विद्यार्थी के रूप में, एक साधक के रूप में। सबका लक्ष्य है कि योग को आत्मसात् करने का प्रयास करें। चाहे एक ही कदम चलकर बैठ जाएँ या यात्रा पूरी करके आराम करें, उद्देश्य तो सबका यही है कि हम इस विद्या को जानें, समझें, आत्मसात् करें।

प्रश्न उठता है कि इस विद्या को आत्मसात् करने के लिये क्या केवल आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान और योग निद्रा करना ही पर्याप्त है या इसके आगे भी कुछ होता है? योग के तो अनेकों ग्रंथ हैं और हर ग्रंथ में एक विशेष आयाम को समझाया गया है, लेकिन हर आयाम का उद्देश्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर एक सकारात्मक और रचनात्मक अवस्था को प्राप्त करना है। जब व्यक्ति अपने जीवन में यह लक्ष्य बना लेता है कि मैं योग द्वारा निर्देशित उद्देश्य को प्राप्त

करने का प्रयास करूँगा तब योग विद्या उसके जीवन में साधना के रूप में प्रकट होती है। जब तक अपने जीवन में अच्छाई की खोज आरम्भ नहीं होती, तब तक योग विद्या साधना नहीं होती। जितने भी लोग संसार में योग करते हैं, क्या सब आध्यात्मिक प्रवृत्ति वाले हैं? नहीं, अभ्यास तो कोई भी कर सकता है, कोई भी सिखा सकता है। वैसे भी लोग बहुत ही सीमित चीजें सिखलाते और करवाते हैं। लेकिन योग तो सीमित नहीं।

अगला अध्याय

विश्व योग सम्मेलन के बाद चिंतन शुरू हुआ कि योग प्रचार का कार्य पूरा हो चुका है, अब हमें अगला कदम लेना है कि इस योग विद्या को आत्मसात् कैसे किया जाए। फिर हमलोगों ने अपना कार्यक्रम भी निश्चित किया। वर्ष 2016 से बिहार योग विद्यालय के सभी कार्यक्रम, सभी सत्र, सभी प्रशिक्षण नये हैं। पिछले पचास सालों में जो कुछ भी हुआ, उसकी कोई छाप इस साल दिखलाई नहीं दे रही है। न स्वास्थ्य रक्षा सत्र है, न शिक्षक प्रशिक्षण सत्र, सबका नया रूप हो गया है। यह जरूरी है, यह मनुष्य को अब अपने प्रति अधिक सचेत और सजग बनाने का प्रयास करेगा, अपनी चेतना को अपने से जोड़ने का प्रयास करेगा, अपने ज्ञान, विवेक और कर्म को सुन्दर बनाने का प्रयास करेगा, अपने आचरण और व्यवहार को अच्छा बनाने का प्रयास करेगा। आरम्भ में यह प्रयास कठिन तो लगता है ही, क्योंकि अभी पचास साल तक तो सभी ने केवल शरीर के साथ दण्ड-बैठक किया है। आखिर हठयोग का आप कौन-सा अभ्यास करते हो? केवल आसन ही तो करते हो। साल में एक बार कभी षट्कर्म कर लिये तो बहुत बड़ी बात हो गई। थोड़ा

बहुत प्राणायाम कर लेते हो, उससे ज्यादा हठयोग तो नहीं करते हो। नौली, बस्ती या धौति करते हो क्या? कोई नहीं करता है। राजयोग का कौन-सा अभ्यास करते हो? केवल प्रत्याहार का अभ्यास, योग निद्रा, क्योंकि सोने में मजा आता है। या फिर कभी थोड़ा-सा अन्तर्मौन या अजपा-जप कर लिया, उससे ज्यादा कोई नहीं करता। जब हमारा अभ्यास सीमित है, तो योग से और अपने से हम क्या अपेक्षा रख सकते हैं? या तो पूरा करो या फिर मत करो।

अगर पूरा करोगे तो पाओगे कि जैसे स्कूल-कॉलेज में मूढ़ बालक प्रवेश करता है और डॉक्टर-इन्जिनियर बनकर निकलता है, वैसे ही योग में भी एक मूढ़ व्यक्ति प्रवेश करता है और एक जाग्रत मनुष्य होकर निकलता है। इसके लिये आत्म-सजगता को बढ़ाने की, और साथ ही योग के विभिन्न आयामों को अपने जीवन के व्यवहार, आचरण और चिंतन में लागू करने की आवश्यकता होती है।

बिहार योग विद्यालय द्वारा कार्यक्रम आरम्भ हो चुका है। पिछले दो वर्षों से यहाँ पर प्रयोग के रूप में अनेक शिक्षण कार्यक्रमों का संचालन किया गया है और इन कार्यक्रमों के दौरान योग के ऐसे पक्षों को देखा गया है जो मनोवैज्ञानिक परिवर्तन लाने में सक्षम होते हैं। यम-नियम आखिर क्या हैं? ये जीवन में एक परिवर्तन को लाने की साधनाएँ हैं। आपने कभी सोचा नहीं होगा, लेकिन स्वामी शिवानन्द जी के गीतों में भी ऐसी साधनाओं का पूरा संकेत और निर्देश दिया गया है। केवल देखने भर की देरी है, सोचने भर की देरी है, समझने भर की देरी है और आत्मसात् करने की देरी है।

जो हमारे आंतरिक, सकारात्मक परिवर्तन के माध्यम बनते हैं और जीवन की प्रतिभा को प्रकट करने में हमें सक्षम बनाते हैं, वे हैं यम-नियम, वे हैं धारणा और

ध्यान। न धारणा का अभ्यास किसी ने कराया है, न ही ध्यान का। अभी तक विश्व में प्रत्याहार की ही शिक्षा दी गई है। प्रत्याहार में प्रवीणता को लाना, ध्यान और धारणा में प्रवेश करना—यह अब लक्ष्य होना चाहिए। जब इस प्रकार हम योग के विभिन्न आयामों को अपने जीवन व्यवहार में जोड़ने लगते हैं, तो योग एक साधना का रूप लेती है, क्रिया का नहीं। साधना का मतलब यह कि अब आप अपने अभ्यास के एक सकारात्मक पक्ष को जागृत करने और अनुभव करने के लिये तत्पर हो रहे हैं।

योग के मनोवैज्ञानिक पक्ष

आजकल लोग अभ्यास के पीछे, प्रैक्टिस के पीछे पागल हैं। उनसे एक घंटा सूर्य नमस्कार करा लोगे तो खुश हो जायेंगे कि हमने खूब प्रैक्टिस की है। शरीर ऊर्जान्वित हो जाता है, खून संचालित होता है, हृदय धड़कता है, श्वास की गति बढ़ जाती है, लोग सोचते हैं कि हमने बहुत व्यायाम कर लिया है। लेकिन अगर उसी व्यक्ति को बोला जाए कि बैठकर तुम अपने विचारों का निरीक्षण करो और बुरे विचारों को अच्छे विचारों में बदलने का प्रयास करो तो पाँच मिनट के बाद वह बोर हो जायेगा। योग से किसी ने नहीं सीखा कि कैसे अपने मन को एकाग्र करना है, मन में सकारात्मक परिवर्तन के लिये किन-किन चीजों पर ध्यान देना है।

मैं आपको जो बातें बतला रहा हूँ उनके पीछे यही प्रयोजन है कि हमें अब शरीर, बीमारी, दर्द से आगे की ओर देखने की आवश्यकता है। जिस ओर हमें देखना है, वह है मन। मन को संभालना जरूरी है क्योंकि आने वाले दिनों में समाज में मानसिक विक्षेप और विकृतियाँ बढ़ने वाली हैं। परेशानियाँ बढ़ रही हैं, तनाव बढ़ रहा है, संघर्ष बढ़ रहा है, चिन्ता बढ़ रही है जबकि संसाधन और अवसर कम हो रहे हैं। दिक्कत तो है ही। इसलिए आवश्यकता है कि हम बाहरी दुनिया पर निर्भर और आश्रित न होकर अपने मन की प्रतिभा को जागृत करके उस पर निर्भर और आश्रित हो सकें।

इस बात को याद रखना कि अगर तुम अपने जीवन की प्रतिभा का समुचित और अच्छा प्रयोग कर पाओगे तो श्री, समृद्धि और शान्ति, सब तुम्हारे चरणों में रहेंगी। लेकिन अगर तुम अपनी प्रतिभा का दुरुपयोग करते हो तो संघर्ष, दु:ख और क्लेश का ही सामना करना होगा। श्री, समृद्धि और शान्ति के लिये यह कोई जरूरी नहीं कि हम किसी कम्पनी के मैनेजिंग डायरेक्टर बनें और हमारे पास प्रचुर धन-सम्पत्ति हो। सफलता की निशानी है कि जीवन में कोई अभाव न रहे और मन हमेशा शान्त तथा रचनात्मक रहे। धन-सम्पत्ति सफलता का लक्षण नहीं है, बल्कि जीवन के अभावों का दूर होना, जीवन में संतोष का आना और जीवन में कर्मठता का होना, ये इस कलियुग में जीवन की सफलता के रहस्य हैं। इसी प्रतिभा को विकसित करने का प्रयास हमें करना है।

अब तक शरीर पर काम हुआ, अगले पचास साल मन पर और फिर उसके बाद आत्मा पर। लेकिन इसके लिए क्लास-दर-क्लास बढ़ना होगा। अगर आत्मा का विश्वविद्यालय बना भी दें तो उसमें आयेगा कौन? प्रवेश तो किसी को मिलेगा नहीं, क्योंकि प्राईमरी क्लास तो कोई पास किया है नहीं। जब हमारे गुरुजी आत्मभाव की चर्चा करते थे तो सब कोई कहते, 'वाह! कितनी सुन्दर चीज कही है', लेकिन श्री स्वामीजी के अतिरिक्त क्या किसी और ने इसका अभ्यास किया है? हमलोग कैसे कर पायेंगे, अभी तो हमने प्राईमरी एजुकेशन ही नहीं पूरा किया है। ऐसे में आत्मभाव कैसे सिद्ध करेंगे, जो कॉलेज-यूनिवर्सिटी का विषय है? जो लोग सोचते हैं कि प्राईमरी क्लास में रहकर यूनिवर्सिटी की पढ़ाई कर सकते हैं, वे भ्रमित साधक होते हैं जो कहीं नहीं पहुँच पाते।

शरीर योग विद्या का एक प्रयोजन था, जो अब स्थापित हो चुका है। कौन-सी बीमारी में कौन-सा अभ्यास करना चाहिये, कैसे रहना चाहिये, किस नियम का पालन करना चाहिये—यह सब तो निश्चित हो चुका है। अब योग का दूसरा दौर साधना का रहेगा, जो मन से सम्बन्धित रहेगा और तीसरा दौर जीवन पद्धति का, जिसमें मनुष्य आत्म-संतुष्टि में रहता है। योग में जीवन पद्धति यूनिवर्सिटी स्तर की शिक्षा है, मन को संभालना हाई स्कूल की ट्रेनिंग है और शरीर को संभालना, यह प्राईमरी स्कूल की ट्रेनिंग है। अब बोलो, प्राईमरी स्कूल में ही अपना जीवन बिताना चाहते हो या सेकेन्ड्री और आगे भी प्रवेश करना है?

दीपक—दूसरे दौर का प्रतीक

हमलोग अब सेकेन्ड्री में प्रवेश करने के लिये तैयार हैं और इसीलिये यहाँ यह दीपक जलाया है। यह दीपक प्रज्ज्वलित रहेगा छाया समाधि में। ज्योति मंदिर में गुरुजी की जलाई हुई अखण्ड ज्योति तो है ही और यह दीपक योग के इस नये अध्याय का प्रतीक है।

यह जो छाया समाधि स्मारक आप देख रहो हो, यह गुरुजी की समाधि का प्रतिबिम्ब है। अन्दर जाओगे तो लगेगा कि हमारे गुरुजी ने यहीं समाधि ली है। उन्होंने घोषित किया है कि मैं मुंगेर में उपस्थित हूँ। इस समाधि का स्वरूप हीरे और कमल का है। हीरा

संसार की सबसे कठोर वस्तु है और कमल संसार की सबसे कोमल वस्तु। कठोर और कोमल, दोनों का योग हीरे और कमल में दिखलाई देता है। कमल चेतना का प्रतीक है और हीरा अन्तिम अवस्था है कोयले के विकास की। कोयला काला होता है, उसकी अपनी कोई कीमत नहीं होती, लेकिन वही कोयला कालान्तर में जब हीरा बन जाता है तो उसको पाने के लिये लोग लालायित होते हैं। वैसे ही जीवन अभी तमस् में है, कोयले के रूप में है, उसे प्रकाशित होना है, उज्ज्वल होना है, पारदर्शी होना है, हीरा बनना है। हमें सत्त्व के आलोक में जीना है। अभी हम सत्त्व, ईश्वर या गुरु के आलोक में नहीं, तमस्, माया और संसार के दायरे में जीते हैं।

सत्त्व जीवन में परिवर्तन का प्रतीक होता है। वाल्मीकि ऋषि पहले रत्नाकर डाकू थे। आज के कानून के मुताबिक उन्हें फाँसी की सजा मिलनी चाहिये थी। लेकिन गुरु रूप में नारद जी की कृपा हो गई और वे डाकू से महान् संत बन गये। गुरु के सान्निध्य, गुरु में निष्ठा और गुरु द्वारा दी गई साधना में निष्ठा से ही यह हो पाया। आज के युग में गुरु द्वारा दी गई साधना में निष्ठा किसको है? आपको है क्या? आप नियमित रूप से अपना मंत्र रोज रात को जपते हो? निष्ठा वाल्मीकि जैसी होनी चाहिये कि अगर मेरे गुरु ने मुझे कुछ करने को कहा है तो मैं एकचित्त होकर उसे कर रहा हूँ, चाहे दीमक ही मेरे शरीर पर क्यों न चढ़ जाए। फिर देह की सुध नहीं होती, मन, वासना और अहंकार की सुध नहीं होती। मात्र समर्पण और निष्ठा की अवस्था में सब कुछ प्राप्त होता है।

यह दीपक छाया समाधि में रखा जायेगा। हमारे गुरुजी के जीवन का ध्येय रहा है– योग की शिक्षा और संस्कार से कोयले को हीरा बनाना। मनुष्य अध्यात्म विद्या को अपने जीवन में आत्मसात् करे, यह उनका उद्देश्य एवं संकल्प था और यही उनके जीवन का कर्म भी रहा। उनके सभी आचरण बतलाते हैं कि किस प्रकार अपने व्यस्त सामाजिक, व्यावहारिक जीवन में हम एक आध्यात्मिक चिंतन को धारण कर एक सामान्य जीवन बिताते हुए भी उत्तमता की खोज कर सकते हैं।

यह साल बिहार योग विद्यालय के लिये महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि अगले पचास सालों के लिये इसने जो निर्णय लिया है, उसमें पहला कदम इस साल औपचारिक रूप से अब वह रख रहा है। इसके लिये बिहार योग विद्यालय को हमारी शुभकामना, और यहाँ पर जितने भी समर्पित, निष्ठावान् एवं परिश्रमी लोग बैठे हैं, स्वामी शिवानन्द जी तथा स्वामी सत्यानन्द जी के इस चिंतन को मूर्त रूप देने के लिये, उन सबको शुभकामना।

– 13 फरवरी 2016, गंगा दर्शन

मानसिक स्वास्थ्य

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

यदि आप सुखी, स्वस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हैं और आध्यात्मिक उन्नति करना चाहते हैं तो आपको मनोविज्ञान का समुचित ज्ञान होना आवश्यक है। अधिकांश शारीरिक रोग बीमार मन की उपज होते हैं। इस तथ्य को सदा याद रखिये। भावनात्मक असन्तुलन से ही सभी प्रकार के स्नायविक और शारीरिक रोग जन्म लेते हैं। यही कारण है कि एक सच्चा संन्यासी, जो भले ही भूखा, निराश्रय और अकेला हो, हमेशा प्रसन्न एवं ऊर्जान्वित रहता है। उसके पास आन्तरिक शक्ति होती है।

आपकी जीवनचर्या सन्तुलित होनी चाहिए। कार्य और विश्राम में सन्तुलन होना आवश्यक है। अत्यधिक शारीरिक थकान या मानसिक तनाव से बचना चाहिए। सभी प्रयासों में आपको मध्य-मार्गी होना चाहिए। किसी भी प्रकार की अति से बचना चाहिए। तभी आप स्वस्थ और शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं, आध्यात्मिक साधना कर सकते हैं तथा अपने सभी प्रयासों में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

रात्रि में दस बजे सो जाइये और प्रात: चार बजे उठिये। इससे आपका स्नायु-तन्त्र स्वस्थ रहेगा। स्नायविक असन्तुलन का एक कारण यह भी है कि लोगों को विश्राम करना मालूम नहीं है। अवकाश के दिनों में वे कामकाजी दिनों से अधिक व्यस्त रहते हैं। अवकाश के दिनों में वे मनोरंजन के नाम पर अधिक ऊर्जा का व्यय करते हैं। वास्तव में मनोरंजन तो होता नहीं, इसके विपरीत ऊर्जा का दुगुना ह्रास होता है। अवकाश के दिनों में मौन का पालन करना चाहिए तथा आध्यात्मिक साधना करनी चाहिए। छ: माह तक इसका पालन करके देखिये, आपको मेरी बात की सत्यता मालूम हो जाएगी।

ऊर्जा संरक्षण का रहस्य

यदि आप उत्तम स्वास्थ्य एवं मानसिक शान्ति का आनन्द लेना चाहते हैं, तो अनुपयोगी और व्यर्थ की गतिविधियों में भाग लेना छोड़ दीजिये। आपको प्रत्येक कार्य के पहले चिन्तन और विवेक करना चाहिए, 'क्या मेरे जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह कार्य आवश्यक है?' मन को संयमित कीजिये। मन विद्रोह करेगा क्योंकि अभी तक आपने मन को अत्यधिक छूट दे रखी थी। इसे मनमानी करने से रोकने के लिए विवेकपूर्ण तरीके निकालिये। व्यर्थ की गपशप और उद्देश्यहीन गतिविधियों से दूर रहकर आप बहुत शारीरिक और मानसिक शक्ति की बचत कर सकते हैं। एक बार आप शरीर और मन को उपयोगी कार्यों में लगाए रखने की

आदत डाल लेंगे, तो आप पाएँगे कि आप अधिक स्वस्थ एवं शान्तिपूर्ण हैं तथा अपनी नियमित साधना के लिए आपके पास अधिक समय है।

चिन्ता करने की आदत के कारण शक्ति का सबसे अधिक ह्रास होता है। एक सच्चा साधक कभी भी चिन्ता नहीं करता। उसे ईश्वर और उसकी दया पर पूर्ण विश्वास होता है। उसमें आत्म-विश्वास होता है। वह शान्त और निर्भीक होता है। वह खुश रहता है। वह परिस्थितियों को ईश्वर की इच्छा समझकर स्वीकार करता है। वह बहुत उन्नति करता है। दूसरी ओर, जो व्यक्ति चिन्ता करता है, वह ईश्वर के द्वारा प्रदान किये गये कई सुनहरे अवसरों को भी खो देता है।

प्रभु के ऊपर निर्भर रहिये और चिन्ता, आशंका एवं भय का नाश कीजिये। भगवान ही शक्ति, आनन्द और ज्ञान के स्रोत हैं। भय, आशंका और चिन्ता मन को खा जाते हैं। वे उसे पंगु, अकर्मण्य और विषादपूर्ण बना देते हैं।

मन और शरीर

मन और शरीर के बीच अन्तरंग सम्बन्ध होता है। यदि किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट हो, तो मन प्रतिक्रिया करता है। वैसे ही मन बीमार होने पर शरीर प्रतिक्रिया करता है। यदि आप विषादग्रस्त हैं, तो आपको भूख नहीं लगती, आप कमजोरी का अनुभव करते हैं, आप फुर्ती से चल नहीं सकते और किसी कार्य को गहरी एकाग्रता एवं लगन से नहीं कर सकते। यदि शरीर के किसी भाग में दर्द है, तो आप सही तरह से विचार या ध्यान नहीं कर सकते हैं। ऐसा सभी का अनुभव है।

शरीर को जो कष्ट होते हैं, उन्हें शारीरिक बीमारियाँ, तथा मन को पीड़ित करने वाली व्याधियों को मानसिक बीमारियाँ कहा जाता है। मानसिक बीमारियाँ ही प्रमुख हैं। किसी व्यक्ति को सूचना मिलती है कि बीमारी के कारण उसके इकलौते पुत्र की मृत्यु हो गई। तुरन्त ही उसका चेहरा पीला पड़ जाता है, वह हताश हो जाता है और भोजन करना बन्द कर देता है। सूचना मिलने पर पहले मन प्रभावित

हुआ, उसके बाद पूरा शरीर प्रभावित हो गया। यहाँ शरीर पर मन का प्रभाव स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

मनोवैज्ञानिक यह मानते हैं कि बीमारियों का कारण शारीरिक न होकर प्रमुखत: मानसिक होता है। उनका मानना है कि क्रोध, घृणा, वासना, प्रतिशोध की भावना आदि से रक्त में एकत्र होने वाले विष के कारण ही बीमारियाँ होती हैं। मन में यदि भय, विषाद या अन्य कोई नकारात्मक भावना है, तो नाड़ियों के माध्यम से उसका प्रभाव शरीर की प्रत्येक कोशिका पर पड़ता है। इन कोशिकाओं में प्राण की कमी हो जाती है, वे कमजोर हो जाती हैं और उनकी कार्यक्षमता घट जाती है।

बहुत कम लोग इस बात को समझते हैं कि घृणा, ईर्ष्या, क्रोध और अधैर्य जैसे अवगुण दूसरों के बजाय स्वयं के लिए अधिक हानिकारक हैं। क्रोध के दस मिनट के दौरे में खर्च होने वाली ऊर्जा दो दिन तक लगातार हल चलाने में लगने वाली ऊर्जा से अधिक होती है। अति-संवेदनशीलता, अधैर्य और चिन्ता के कारण समय से पहले ही बाल सफेद हो जाते हैं।

मन आखिर क्या है? यह एक रहस्यमयी, सूक्ष्म शक्ति है। यह आत्म-शक्ति की ही अभिव्यक्ति है। प्रकृति ने ही इसका निर्माण किया है। यह वासनाओं, विचारों एवं कल्पनाओं का समूह है। यह है तो काल्पनिक, परन्तु लगता वास्तविक है। यही इस संसार को जन्म देता और नष्ट करता है। यह माया या अज्ञान की सन्तान है। यह सत्त्व, रजस् और तमस् के तीन गुणों से निर्मित है।

जब सत्त्व की अधिकता होती है, तब आपको आरोग्य एवं शान्ति का अनुभव प्राप्त होता है। जब रजस् की अधिकता होती है, तब मन विचलित एवं विक्षिप्त हो जाता है। तमस् की अधिकता मन को सुस्त कर देती है।

स्वस्थ मन

मन को शुद्ध बनाइये। बुद्धिमानों के सम्पर्क में रहिये। शान्ति, आस्था, सत्य, प्रेम, दया, साहस, श्रद्धा, प्रसन्नता, आत्म-विश्वास और ब्रह्मचर्य का विकास कीजिये। सांसारिक विचारों को दिव्य विचारों में बदलने का प्रयास कीजिये। मन को आध्यात्मिक या दैवी विषयों में लगाइये। आप सुख, शान्ति एवं सामंजस्यता प्राप्त करेंगे। आपका मन पूर्ण रूप से स्वस्थ रहेगा। आपको कोई भी शारीरिक कष्ट नहीं होगा।

हमेशा दूसरों के गुणों को देखिये। तब आप किसी से घृणा नहीं करेंगे। दूसरों की उपलब्धियों की प्रंशसा कीजिये, ईर्ष्या स्वत: समाप्त हो जाएगी। आपको आध्यात्मिक उन्नति करनी चाहिए, न कि ईर्ष्या से प्रेरित होकर प्रगति करने वालों की टाँग खींचनी चाहिए। ईर्ष्या से हीन-भावना आती है, तथा स्वास्थ्य और मन कमजोर हो जाता है। यही मानसिक विखण्डता का कारण है।

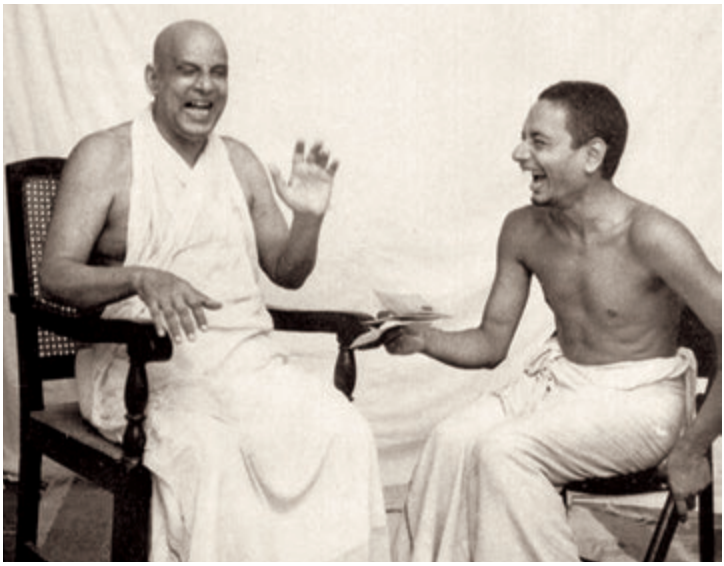

यदि आप मानसिक रूप से स्वस्थ रहना चाहते हैं, तो आपको हमेशा प्रसन्नचित्त रहना चाहिए। आपको इस गुण का बार-बार विकास करना चाहिए। प्रसन्नता मन के लिए सर्वोत्तम टॉनिक है। विषाद, उदासी और अप्रसन्नता मन को खा जाते हैं।

प्रसन्नता, सामंजस्य, शान्तचित्तता, आस्था, प्रेम और करुणा के गुण प्रकृति के रचनात्मक सिद्धान्तों के साथ सहयोग करते हैं। इनसे कोशिकाएँ एवं मांसपेशियाँ विश्रान्त हो जाती हैं एवं उनमें पवित्रता और दिव्य शक्ति का संचार होता है। इन सकारात्मक गुणों से सभी शारीरिक अंगों का कार्य सामंजस्यपूर्ण हो जाता है।

अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य का अभ्यास मानसिक स्वास्थ्य के लिए परम आवश्यक है। दूसरों को हानि पहुँचाना, झूठ बोलना और अन्य दुष्प्रवृत्तियाँ आपके मन को चिन्ता, भय एवं अशान्ति से भर देती हैं। आपका मन एक क्षण के लिए भी शान्त नहीं रहता। जहाँ मानसिक शान्ति नहीं, वहाँ मानसिक स्वास्थ्य कैसे हो सकता है?

विश्व-प्रेम, सेवा, दया, मित्रता, सहानुभूति और करुणा से घृणा को दूर करिये। नि:स्वार्थ सेवा और परोपकार के द्वारा लोभ को दूर करिये। अच्छा मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करने में ये सभी आपकी अत्यधिक सहायता करेंगे।

सभी प्रकार के मानसिक द्वन्द्वों से दूर रहिये। दूसरों के मुद्दों में दखल मत दीजिये। सहनशील और सामंजस्यपूर्ण बने रहिये। दूसरों को उनके तरीके से उन्नति करने दीजिये। प्रत्येक व्यक्ति का अपना मार्ग, क्षमता, दृष्टिकोण और स्वभाव होता है। कोई भी दो व्यक्ति एक जैसे नहीं होते। अपने स्वभाव में व्याप्त प्रत्येक अवांछित दुर्गुण को दूर करने का प्रयास कीजिये।

निम्न, हानिकारक विचारों और वासनाओं को दूर करके संकल्प-शक्ति का विकास कीजिये। तब आप अपने विशुद्ध, शक्तिशाली संकल्प के द्वारा अपने शरीर की समस्त गतिविधियों एवं प्राणिक प्रवाहों को अनुशासित एवं नियन्त्रित कर पाएँगे। शरीर के सभी अंग एवं तंत्रिका-तन्त्र, बीमारी या विपरीत परिस्थितियों में भी विवेकपूर्ण, सामंजस्यपूर्ण और शान्तिपूर्ण तरीके से अपना कार्य करने लगेंगे।

अपनी संकल्प-शक्ति से आप अपने शरीर के रक्त-संचार को सुचारू रूप से चला सकते हैं तथा अपने प्राणिक प्रवाह को उन अंगों या कोशिकाओं की ओर मोड़ सकते हैं, जिन्हें उनकी आवश्यकता सबसे अधिक हो। आप विभिन्न कोशिकाओं में व्याप्त अवरोधों को दूर कर सकते हैं। आप अपने बीमार अंगों में प्रबल प्राणिक प्रवाह एवं स्नायु शक्ति का संचार कर सकते हैं। आप अपने आपको पुन: ऊर्जान्वित कर सकते हैं। आपमें जितनी अधिक आस्था, शान्तचित्तता, प्रेम, साहस, सहनशीलता, श्रद्धा और दया होगी, उतनी ही अधिक दिव्य शक्ति आपमें प्रवाहित होगी।

वर्तमान में रहना

एक और महत्त्वपूर्ण नियम। यदि आप स्वस्थ और सुखी जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, तो हमेशा वर्तमान में रहिये। अपना पूरा ध्यान अपने वर्तमान के कार्य में लगाइये। आज का दिन, अभी का समय अच्छी तरह व्यतीत कीजिये। जो बीत गया वह एक निष्क्रिय भूतकाल में बदल चुका है, जिसमें और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। आने वाला कल अभी बहुत दूर है। भूतकाल को भूल जाइये एवं भविष्य की चिन्ता मत कीजिये। भविष्य अपनी देखभाल स्वयं करेगा।

यदि आप इस युक्ति से काम लेते हैं, तो आप कभी तनावग्रस्त होकर कार्य नहीं करेंगे। आप एकाग्र, शान्त, स्थिर एवं कार्यकुशल रहेंगे। आप उन लोगों से कहीं अधिक प्राप्त कर सकेंगे, जो वर्तमान के कार्य को छोड़कर भूतकाल या भविष्य की चिन्ता करते रहते हैं। समय ऐसे असावधान लोगों को पीछे छोड़कर आगे निकल जाता है। वे हमेशा जल्दबाजी में रहते हैं, हमेशा अत्यधिक तनाव में रहते हैं। उनका मन उनपर शासन करता है। मन की सनकों और कल्पनाओं में ही उनका सारा वक्त निकल जाता है। वे कैसे कुछ प्राप्त कर सकते हैं?

चाहे कितना ही कठिन कार्य क्यों न हो, तुरन्त उसमें लग जाइये। लगन एवं मेहनत से असम्भव सम्भव हो जाता है। घबराइये नहीं। सभी चीजों को सामान्य रूप से लीजिये। किसी भी कार्य से डरिये नहीं। अपने मन को शीघ्रता से अनुकूल बनाइये। शीघ्र निर्णय लीजिये। ऐसा आप तभी कर सकते हैं जब आपका चित्त शान्त हो। घबराने वाले लोग कभी कोई कार्य अच्छी तरह नहीं कर सकते। कठिन कार्यों को करने से संकल्प-शक्ति और सहन-शक्ति का विकास होता है, जिनके द्वारा आप आसानी से अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

मानसिक संकल्प-विकल्प

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योग केवल आध्यात्मिक व्यक्तियों के लिए ही नहीं, बल्कि रोगी व्यक्तियों के लिए भी है। जीवन में बीमारी और परेशानी का मुख्य कारण है—मन का चंचल होना। आज प्रत्येक व्यक्ति का मन चंचल है। इसी चंचल मन के कारण वह परिस्थितियों का दास बन गया है और इसी के कारण उसे अपने जीवन में अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ रहा है। तुम किसी दूसरे को दोष मत दो, क्योंकि सब तुम्हारे चंचल मन के कारण ही होता है। यदि संसार में किसी वस्तु को पाना चाहते हो तो मन की चंचलता को दूर करो। जिस दिन तुम्हारा मन शांत हो जाएगा, उस दिन तुम अपने प्रारब्ध, अपनी परिस्थितियों, अपनी बीमारियों को बदलकर शक्तिमान् बन जाओगे, देवता बन जाओगे। संत कबीर ने तो स्पष्ट रूप से कहा है—'मैं तो उन संतन का दास, जिन्होंने मन मार लिया।'

योग के विभिन्न मार्गों में, चाहे वह राजयोग हो, भक्तियोग हो, कुण्डलिनी योग हो, लय योग हो या अन्य कोई भी योग हो, सबमें केवल एक बात बतलाने की चेष्टा की है कि चंचल मन को कैसे शांत किया जाए। यह मन केवल रात या दिन में ही नहीं, बल्कि निद्रावस्था में भी चंचल रहता है। क्लोरोफार्म और एनेस्थेसिया देने पर भी चंचल रहता है। इस मन को कैसे शांत किया जाए?

पहले यह प्रश्न उठता है कि यदि मन चंचल है तो क्या नुकसान होता है? सामान्य व्यक्ति चंचल मन के कारण होने वाली दुर्घटनाओं का अनुमान नहीं लगा सकता। वह घर, पड़ोसी, प्रारब्ध या सरकार को दोष देगा, मगर अपने ऊपर दोष नहीं लेगा। वह कभी यह नहीं कहेगा कि मेरा मन चंचल था, इसलिए यह सब हो गया।

मुंगेर में हमारा आश्रम बन रहा है। वहाँ बिजली की हालत ऐसी है कि वोल्टेज कभी 120, कभी 220 तो कभी 300 तक हो जाती है। परिणाम यह हुआ कि एक मशीन जल गई। जब बिजली की वोल्टेज ज्यादा होती है तो मशीन जलती है, उसी प्रकार जब विचारों में अस्थिरता आती है तो मन रूपी मशीन जल जाती है।

योग और मनोरोग

योग शास्त्र में जो सबसे पहली बात समझाई गई है वह है मन में उत्पन्न होने वाले संकल्प-विकल्प तथा उन्हें कैसे निष्प्रभाव किया जाए। अब इसे अच्छी तरह समझने का प्रयत्न करो। जब कोई घटना घटती है तो उसका मन पर प्रभाव पड़ता है। उस घटना के कारण मन में संस्कार जम जाते हैं और उससे संबंधित संकल्प-विकल्प मन में उठते रहते हैं। चाहे विद्यार्थी हो, व्यापारी हो, अधिकारी हो या गृहिणी,

दिन-रात वही चीजें मन में आती हैं। किसी एक घटना पर मन आसक्त हो जाता है, फिर दिमाग में घूम-घूम कर वही विचार आते रहते हैं। लाख प्रयत्न करने पर भी तुम उन विचारों से अलग नहीं हो पाते। मन को उन घटनाओं से अलग करने के लिए तुम्हारे पास कोई उपाय नहीं है। तुम लोग मन बहलाने के लिए कभी सिनेमा चले जाते हो, कभी पी लेते हो तो कभी आमोद-प्रमोद से अपने को संतुष्ट करते हो, मगर अंत में वहीं आ जाते हो जहाँ पहले थे। यह मानसिक रोग सबको है। इस रोग से छुटकारा पाने के लिए तुम्हें योग के पास आना ही होगा।

आज बीसवीं शताब्दी में मनोविज्ञान शास्त्र का उद्‌भव हुआ, जिसमें मानसिक रोगों की बात कही जाती है। मगर यह केवल इस शताब्दी की बात नहीं है। आज से कई हजार वर्ष पूर्व भारतवर्ष के ऋषि-मुनियों ने इस शास्त्र को जन्म दिया था। उन्होंने जाना कि मनुष्य का मन सुख-दुःख, काम-क्रोध और ईर्ष्या-द्वेष में उलझता है। ये सब मन में संकल्प-विकल्प को जन्म देते हैं। प्रत्येक घटना का मन पर प्रभाव पड़ता है और ये हमें नित्य-निरंतर प्रभावित करते रहते हैं। जैसे-जैसे मन पर जीवन की घटनाओं का प्रभाव पड़ता है, वैसे-वैसे शरीर के अंदर की रासायनिक क्रियाएँ बदलने लगती हैं, हॉर्मोनल प्रक्रियाएँ बदलने लगती हैं, नर्वस सिस्टम की क्रियाएँ बदलने लगती हैं, शरीर के अंदर का तापमान बदलने लगता है, खून के गुण-धर्म बदलने लगते हैं और तब हमें बीमारी पकड़ लेती है।

भारत में ही योग विद्या का उद्‌भव हुआ और यहीं पर मन के रहस्यों को खोला गया। रोग, विकार, दुश्चरित्र, अपराधी व्यक्तित्व, मानसिक दुर्बलता या स्मृति नाश का कारण मन ही है, न कि वाइरस और बैक्टिरीया। इस बात को अच्छी तरह सुन लो। आज नहीं तो कल जब पश्चिम के लोग इस बात को कहने लगेंगे तब जाकर हिन्दुस्तान के लोग इसे मानेंगे।

योग शास्त्र का प्रमुख विषय मन है। चाहे कर्मयोग को देखो या राजयोग को या ज्ञानयोग को, सब में एक ही बात कही गयी है—मन के अन्दर उत्पन्न होने वाले संकल्पों-विकल्पों एवं विक्षेपों को कैसे रोका जाए? बाहर चल रहे टेप-रिकॉर्डर को तुम बंद कर सकते हो, पर जो टेप-रिकॉर्डर तुम्हारे अंदर चल रहा है उसे कैसे बंद करोगे? इस टेप-रिकार्डर में तो नित-निरंतर जीवन की घटनाएँ अंकित हो

रही हैं। सुख-दु:ख का हर एक संस्कार चलचित्र की तरह जमा हो रहा है। जीवन की एक भी घटना ऐसी नहीं है जो इसमें अंकित न हो। इसका इलाज क्या है? मन पर विजय पाना। इस बात को गाँठ बाँध लो कि जब तुम अपने मन के स्वामी बनोगे, तभी अपने जीवन के स्वामी बनोगे। इतिहास में जिन महान् लोगों की तुम पूजा करते हो, जिनकी गाथाओं को वर्णन करते हो, जिनकी विरुदावलि गाते हो, जिनकी कहानियाँ सुनते हो, उन लोगों ने मन को वश में कर उस पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली थी। इसी आधार को लेकर योग शास्त्र का जन्म हुआ।

मुझे एक छोटी-सी घटना याद आ रही है। बहुत वर्ष पहले की बात है, जब मैं ऑस्ट्रेलिया जा रहा था। तब एयर इंडिया के विमान में मेरे बगल में एक अंग्रेज व्यक्ति बैठे हुए थे। बातचीत के दौरान उनसे पता चला कि उन्होंने एक थिसीस लिखी थी भारतीय मिष्ठान्नों पर। कुछ समय के बाद खाना परोसा गया और बाद में रसगुल्ला दिया गया। उन्होंने मुझसे पूछा, 'यह क्या है?' मैंने कहा, 'आपने तो थिसीस लिखी है, आप ही बतलाइये कि यह क्या है?' तो वे बोले, 'थिसीस तो लिखी है, मगर अनुभव नहीं है।' इस तरह योग केवल सुनने के लिए नहीं, अनुभव करने के लिए है। इसका अभ्यास करना होगा।

मनोवृत्तियाँ

तुम्हारे मन में उत्पन्न होने वाले जो विचार हैं, वह मन नहीं, मन की वृत्तियाँ हैं। कामवासना मन नहीं, मन की वृत्ति है। इसी प्रकार क्रोध, चिन्ता, दु:ख-सुख आदि सभी मन की वृत्तियाँ हैं। वृत्ति किसे कहते हैं? जैसे नदी, सरोवर या समुद्र में लहरें उठती हैं, वैसे मन में भी लहरें उठती हैं। लहरें कब उठती हैं? जब हवा आएगी, तूफान आएगा, आँधी चलेगी, तब लहर उठेगी। उसी तरह जब तुम्हारे मन पर बाहरी घटनाओं का आघात पड़ता है, तब मन में अनेक प्रकार की लहरें उठती हैं। ये लहरें और तरंगें ही चित्त-वृत्तियाँ हैं।

तुम जिस जाग्रत मन के द्वारा इन्द्रियों के विषयों का अनुभव करते हो, मन केवल उतना ही नहीं है। यह बात प्रत्येक व्यक्ति को जाननी चाहिए। चाहे नींद की गोली लो, एनेस्थेसिया लो, क्लोरोफार्म लो, गाँजा-भाँग लो या बेहोश हो जाओ, मगर मन रहता है। जब तक ज्ञान की प्राप्ति न हो, तब तक मन रहेगा। जाग्रत अवस्था में तुम सांसारिक विषयों का अनुभव इन्द्रियों से करते हो, स्वप्नावस्था में अनेक प्रकार के स्वप्न देखते हो तथा सुषुप्ति अवस्था में गहरी नींद में सो जाते हो, लेकिन तब भी मन रहता है।

मन के कारण ही कुछ लोगों को नींद नहीं आती। वे पागल-से हो जाते हैं। वे सोचते हैं कि नींद की गोली लेकर सो जायेंगे तो मनीराम से छुट्टी मिल जाएगी। मगर ऐसा नहीं होता। एक बार एक व्यक्ति ने आकर मुझसे कहा, 'स्वामीजी, मैं

बहुत परेशान हूँ। मेरा लड़का स्विमिंग-पूल में डूबकर मर गया।' मैंने पूछा, 'अब तुम दिन-रात क्या करते हो?' तो वे बोले, 'जहाँ-जहाँ जाता हूँ, यही विचार घूम-घूम कर आ जाता है, रात को नींद नहीं आती। फिर गोली लेकर सो जाता हूँ।' मैंने कहा, 'गोली लेकर सो जाते हो तो क्या तुम्हारा मन उस बात को भूल जाता है? तब वे बोले, 'मुझे तो कुछ पता नहीं चलता, मगर जागने के बाद फिर से वही शुरू हो जाता है।'

साधना का प्रयोजन

हमारे शास्त्र कहते हैं कि अनुभव से बीज पैदा होता है। वह बीज संस्कार के रूप में हमारे चित्त में दब जाता है और वही मन में विचार लेकर प्रकट होता है। इसलिए साधना की पद्धति बतलाई गई है। जब साधना के लिए बैठते हैं और चित्त को एकाग्र करने का प्रयत्न करते हैं तो हमारे मन में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं। सिनेमा में या गप्प लगाते वक्त कुछ नहीं होता, परन्तु जिस समय एकाग्रता का अभ्यास शुरू करोगे, उसी समय तुम्हारे मन में इधर-उधर से अनेक प्रकार के विचार आने लगेंगे। इसका मतलब है कि जितने भी अनुभव हैं वे सब तुम्हारे अन्दर हैं और साधना की अवस्था में प्रकट होते हैं। ऐसी स्थिति में साधना की पद्धति को ठीक तरह से समझना चाहिए।

जब हम साधना करते हैं तब मन में संकल्प-विकल्प उठते हैं। उन्हें रोकना नहीं चाहिए। यह चीज साधकों को अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए। आप अपने विचारों को जितना अधिक दबायेंगे उतनी ही बार वे पूरी ताकत के साथ ऊपर आने की कोशिश करेंगे। इसलिए विचारों को दबाने से कोई फायदा नहीं होता। मंत्र का जप करते समय या अन्य साधना करते समय मन में संकल्प-विकल्प आयें तो उन्हें आने दो और अपनी साधना चालू रखो। ऐसा करने से बहुत-से विचार आते हैं और कभी-कभी तो संतुलन बनाये रखना भी मुश्किल हो जाता है। उच्च कोटि की साधनाओं से मन के अन्दर के संस्कार बहुत तीव्र गति से प्रकट होते हैं। बहुत से लोग इसे संभाल नहीं पाते। इसलिए साधना मार्ग में पहले हठयोग को लिया गया है। हठयोग के बाद ही दूसरी साधना क्यों शुरू करते हैं, यह बात भी जानने योग्य है।

मन और प्राण

हमारे शरीर में मूलत: दो तत्त्व हैं—एक मनस्तत्त्व और दूसरा प्राणतत्त्व। मनस्तत्त्व का संबंध ज्ञानेन्द्रियों से और प्राणतत्त्व का संबंध कर्मेन्द्रियों से है। प्राण और मन को हमारे यहाँ शिव और शक्ति के नाम से भी पुकारा जाता है। इन दो शक्तियों को हठयोग में इड़ा-पिंगला और कहीं-कहीं गंगा-यमुना के नाम से भी जाना जाता है। मन और प्राण पूरे शरीर में व्याप्त हैं। जिसके द्वारा तुम जीवित हो और कार्य करते हो वह प्राण तत्त्व है तथा जिसके द्वारा तुम सोचते-समझते हो वह मनस्तत्त्व है।

इन दोनों तत्त्वों के विषय में भारतवर्ष के ऋषि-मुनियों ने बहुत पहले सोचा और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि प्राण को नियंत्रित करने से मन काबू में आता है तथा मन को नियंत्रित करने पर प्राण काबू में आता है। हठयोग शास्त्रों में लिखा है कि यदि प्राण नियंत्रण के बाहर चला जाए तो मन अनियंत्रित हो जाता है और यदि मन नियंत्रण के बाहर चला जाए तो प्राण भी नियंत्रण के बाहर चला जाता है। मन के अंदर उठने वाले संकल्प-विकल्प को जीतने के लिए प्राणों को नियंत्रित करना चाहिए। प्राणों को नियंत्रित करने का तात्पर्य है प्राणायाम का अभ्यास करना। अनेक शास्त्रों में इसका वर्णन है। इसके अतिरिक्त महात्माओं ने स्वयं अनुभव करके सिखाया है। राजयोग के अनुसार श्वास लेने और छोड़ने के बीच में जो थोड़ा-सा गति-विच्छेद है वह प्राणायाम है, अर्थात् श्वास रोकने को प्राणायाम कहते हैं। जब श्वास को रोकते हैं तब श्वास को कहीं बांध करके रखना पड़ता है। इसे योग की भाषा में बंध कहते हैं। बंध तीन प्रकार के होते हैं—मूल बंध, जालन्धर बंध और उड्डियान बंध। इनके अभ्यास से मन धीरे-धीरे शांत होने लगता है।

हठयोग में मनस्तत्त्व और प्राणतत्त्व तालमेल के साथ काम करते हैं। मेरुदण्ड के दायें और बायें भाग में दो नाड़ियाँ हैं, जिनमें ये तत्त्व नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित होते हैं। बायीं तरफ की नाड़ी जिसे इड़ा कहते हैं, मनस्तत्त्व का प्रतिनिधित्व करती है और दायीं तरफ की नाड़ी जिसे पिंगला कहते हैं, प्राण तत्त्व का प्रतिनिधित्व करती है। मेरुदण्ड के अंदर केवल ये दो नाड़ियाँ नहीं हैं, बल्कि योग शास्त्र के अनुसार इनसे अन्य नाड़ियाँ भी जुड़ी हुई हैं जो बहुत ही सूक्ष्म हैं जैसे ब्रह्म नाड़ी इत्यादि। इड़ा और पिंगला नाड़ियों से शक्ति उसी प्रकार प्रवाहित होती है जिस प्रकार तार से बिजली प्रवाहित होती है। इस तरह शरीर में सिर से लेकर पैर तक

एक-एक बिन्दु किसी-न-किसी नाड़ी से सम्बद्ध है। योग शास्त्र के अनुसार केवल हृदय से निकलने वाली नाड़ियों की संख्या बहत्तर हजार है। अभी जैसे माइक का संचालन तार द्वारा हो रहा है उसी प्रकार इस हाथ का संचालन नाड़ियों द्वारा हो रहा है। जरा सोचो यह शरीर कितनी बड़ी मशीन है, जिसके अंदर लाखों नाड़ियाँ हैं!

आप लोगों को केवल एक चीज समझनी है कि प्राण और चित्त के द्वारा जीवन का ज्ञान होता है। शरीर का हर एक अंग इन दो प्रकार की ऊर्जाओं से संयुक्त है। जहाँ प्राण होता है वहाँ चित्त होता है तथा जहाँ चित्त होता है वहाँ प्राण भी होता है। शरीर में इड़ा और पिंगला नाड़ियाँ हाई-टेंशन लाइन की तरह हैं। तुम बिजली की हाई-टेंशन लाइन को ट्रान्सफॉर्मर में लाते हो, ट्रान्सफॉर्मर से लाइन घर के मीटर बोर्ड में जाती है, फिर वहाँ से मेन-स्विच में, फिर जंक्शन में और उसके बाद सभी कमरों में। ठीक वही हाल हमारे शरीर में प्राणों का है। इस शरीर में अनेक जंक्शन हैं जिन्हें चक्र कहते हैं। ये चेतना और ऊर्जा के वितरण केन्द्र हैं। शायद तुम लोगों ने इनका नाम भी सुना होगा, जैसे मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि आदि। इन चक्रों के माध्यम से मन: शक्ति और प्राणशक्ति सम्पूर्ण शरीर में वितरित होती है। इस वितरण क्रिया के कारण ही हमारे शरीर में जीवन है। जब शरीर के किसी भाग में रोग हो जाता है, तो इसका मतलब तुम्हारे शरीर के उस भाग में शक्ति का अभाव है। वहाँ पर ऊर्जा का प्रवाह रुक गया है। इस स्थिति में आसनों के द्वारा ऊर्जा प्रवाह के अवरोध को दूर करते हैं। यह रोग की बात हुई।

हठयोग एवं राजयोग

अब मन के संकल्प-विकल्प को दूर करने की विधि पर आइये। हमारे यहाँ इसे दूर करने के दो उपाय हैं—राजयोग और हठयोग। हठयोग कहता है कि तुम प्राणों को जीतो तो मन वश में हो जाएगा। मन के साथ लड़ाई-झगड़ा मत करो। जबकि राजयोग कहता है प्राणायाम करने की जरूरत नहीं, तुम केवल मन के विचारों को रोको, बस मनीराम तुम्हारे वश में हो जायेगा। विभिन्न साधकों की स्थिति को ध्यान में रखकर ये दो उपाय बतलाये गये हैं। कोई छोटा-बड़ा नहीं है, मगर आज के वातावरण में प्राण को नियंत्रित करना मन को नियंत्रित करने की अपेक्षा सरल है, क्योंकि श्वास लेते समय प्राण तो कुछ समय के लिए पकड़ में आता है, परन्तु मन की चाल पकड़ में नहीं आती। वजन, आकार या नाम, कुछ पता न होने के कारण विचारों का पता नहीं चलता। एक विचार समाप्त नहीं होता कि तुरन्त दूसरा आ जाता है। हम बैठे-बैठे सोचते हैं कि अब कोई विचार नहीं आने देंगे, लेकिन विचारों की लाइन लग जाती है और मन अदृश्य होकर हमला करता जाता है। इसकी अपेक्षा प्राणायाम से इसे जीतें।

प्राणायाम में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है। जब तुम नासिकाओं से श्वास लेते हो तो केवल ऐसा मत समझो कि फेफड़ों में सिर्फ ऑक्सीजन ही जा रही है। यह

बात कुछ हद तक ठीक है, पर यह क्रिया इतनी ही नहीं है। थोड़ा ध्यान से सुनो। जब तुम बायीं अथवा दाहिनी नासिका से श्वास लेते हो तब मस्तिष्क में इसकी प्रतिक्रियाएँ होती है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि श्वास का असर केवल फेफड़े या श्वसन प्रणाली पर ही नहीं, बल्कि मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्धों पर भी पड़ता है।

इस संदर्भ में वैज्ञानिकों ने कुछ वर्षों से प्रयोग भी किये हैं। इस विषय पर एक पुस्तक भी लिखी गई–'एवरी आवर स्टॉर्म इन द ब्रेन' यानि हर घण्टे मस्तिष्क में तूफान। एक वैज्ञानिक ने प्रयोग करके यह किताब लिखी। पहले उसे मालूम नहीं था कि दिमाग के दोनों गोलार्द्धों में से एक गोलार्द्ध एक घंटा काम करता है तो दूसरा बंद रहता है और जब दूसरा काम करता है तो पहला बंद रहता है। प्रयोग के द्वारा उन्हें यह सब ज्ञात हुआ।

इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना

इस विज्ञान को हमारे यहाँ स्वरयोग कहते हैं। इसके अनुसार एक घंटा बीस मिनट इड़ा चलती है। तब पिंगला बंद रहती है और जब पिंगला चलती है, तब इड़ा बंद रहती है। मगर इसका भी विशेष नियम है। जब अमावस्या के बाद शुक्ल पक्ष शुरू होता है तब प्रतिप्रदा, द्वितीया, तृतीया को एक तरीके से, फिर चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी को दूसरे तरीके से, सप्तमी अष्टमी नवमी को पहले तरीके से, दशमी, एकादशी, द्वाद्वशी फिर दूसरे तरीके से श्वास चलती है। यह सूर्योदय के समय से प्रारंभ होती है और कृष्ण पक्ष में उसकी आवृत्ति दूसरी तरह की होती है। इस श्वास क्रिया का संबंध मस्तिष्क से है। स्वरयोग शास्त्र कहता है कि जब तुम्हारा दाहिना स्वर चले तो इस-इस तरह के काम करो और बाँया स्वर चले तो कैसा काम करो। जब दोनों स्वर एक साथ चलते हैं, तब उसे सुषुम्ना कहते हैं। जिस समय सुषुम्ना स्वर चलेगा उस समय तुम्हारे संकल्प-विकल्प अपने आप दूर हो जायेंगे। अब प्रश्न उठता है इस सुषुम्ना को कैसे जगायें?

संत कबीर ने कहा है कि जब इड़ा और पिंगला दो-चार महीने एक साथ मिल जाएँ तो सुषुम्ना का राग निकलता है। जब यह सुषुम्ना नाड़ी शुरू हो जाए तब साधना करनी चाहिए। बहुत-से लोग कहते हैं कि भक्ति श्रेष्ठ है और प्राणायाम की जरूरत नहीं है। माना कि भक्ति श्रेष्ठ है, कीर्तन और पूजा आसान है, मगर उसके साथ मनीराम को मिलाओ, तब पता चलेगा कि कितना कठिन काम है, मन कहाँ-कहाँ भागता है। प्राणायाम के बाद जब सुषुम्ना जागृत होती है तो थोड़ी देर के लिए पद्मासन लगाते ही मन अपने आप शांत हो जाता है। प्राणायाम से मानसिक संकल्प-विकल्प स्वत: शांत होते हैं। प्राणायाम करने से पूर्व आसनों का अच्छा अभ्यास होना चाहिए। जब मैंने अपने गुरुजी से आसनों के बारे में पूछा तो उन्होंने बतलाया कि आसनों से शरीर में होने वाले अवरोध दूर होते हैं।

आज की दुनिया में तनाव सब जगह व्याप्त है। एक छोटे-से चार-पाँच साल के बच्चे के दिमाग में भी कितना तनाव रहता है। पढ़ना है तो पहला तनाव, पास होना है तो दूसरा तनाव, अगर एक बार फर्स्ट आया तो हर बार फर्स्ट आना है, यह तीसरा तनाव। बचपन से लेकर बुढ़ापे तक जीवन तनावग्रस्त रहता है। बाल्यावस्था में ही इतना अधिक तनाव होता है कि उनका तन-मन बिल्कुल टूट जाता है। उसके बाद पारिवारिक और लौकिक जीवन शुरू होता है, जिसमें हमारी प्रतिक्रियाएँ सामान्य नहीं रह पातीं। परिणामत: पारिवारिक जीवन सुखी नहीं हो पाता, सामाजिक जीवन निर्भय नहीं हो पाता। बौद्धिक जीवन निर्विकार नहीं रहता, इसलिए अध्यात्मिक लक्ष्य भी स्पष्ट नहीं रहता। इन सबका कारण यही है कि मन हमेशा तनाव से भरा रहता है। योग की भाषा में इसे क्लेश कहते हैं। इसके निवारण के लिए तुम्हें स्थिरता का ज्ञान होना आवश्यक है। गीता के दूसरे अध्याय में अर्जुन ने श्रीकृष्ण से स्थितप्रज्ञ पुरुष के बारे में पूछा है–

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधी: किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥

हे केशव, जिसकी बुद्धि स्थिर है, ऐसे समाधि में स्थित महापुरुष का व्यवहार कैसा होता है और उसका चाल-चलन कैसा रहता है? स्थितप्रज्ञ पुरुष जीवन की मर्यादाओं को, जीवन की सीमाओं को, जीवन के सुख-दु:ख को आसानी से वहन कर सकता है। जैसे वोल्टेज स्टेबेलाइज़र बिजली की गड़बड़ी को मर्यादा के अन्दर रखता है, वैसा ही स्टेबेलाइज़र तुम्हारे मन में होना चाहिए ताकि जीवन के दु:ख और क्लेश तुम्हें दु:खी न कर सकें। राम जी के जीवन में भी तो दु:ख आया। उन्हें कितनी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं। पहले वन जाने का आदेश मिला, उसके बाद पिता की मृत्यु हुई। सीता को रावण उठाकर ले गया। यदि तुम्हारे साथ ऐसा हो जाए तो क्या करोगे, जीवन भर रोना आएगा। परन्तु राम जी सुख-दु:ख के प्रति तटस्थ रहे। कहने का मतलब स्थितप्रज्ञ व्यक्ति जीवन के सुख-दु:ख के उतार-चढ़ाव में बिल्कुल स्थिर और उद्वेगरहित होता है।

अपनी सीमाओं को जीतने के लिए, अपने जीवन में संतुलन बनाने के लिए योग शास्त्र है। यदि शरीर लेकर आये हो तो सुख-दु:ख भोगना ही पड़ेगा– *देहधरे को दण्ड है, सब काहू को होय*। फर्क केवल इतना है– *ज्ञानी भुगते ज्ञान सो, मूरख भुगते रोय।* तुम ज्ञानियों की तरह संसार में जीवित रहो। अपनी शक्तियों को दु:ख के विचारों से नष्ट न होने दो। तुम जहाँ भी हो, वहाँ से ऊपर उठकर एक श्रेष्ठ आदमी बनो। बस यही योग का प्रमुख दृष्टिकोण है। इसलिए पातंजल योग के प्रथम सूत्र में योग की परिभाषा देते हुए कहा गया है– *योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:* अर्थात् चित्त की वृत्तियों को रोकना ही योग है।

–1983, कोलकाता

सेना और योग

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

भारतीय सेना के साथ आज यह हमारा पहला मिलन नहीं है, बल्कि पिछले पच्चीस वर्षों से हमलोग समय-समय पर भारतीय सेना के साथ मिलकर अनेकों प्रकार के कार्य करते आ रहे हैं। हमलोगों ने डी.आर.डी.ओ. के साथ मिलकर पुणे में कुछ अनुसंधान कार्य भी किया है। भारतीय सेना के साथ हमलोगों का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और इस सम्बन्ध की शुरुआत होती है जनरल बी.सी. जोशी के साथ जो तत्कालीन सेनाध्यक्ष थे।

सन् 1994 में उन्होंने हमलोगों के साथ सियाचीन ग्लेशियर में तैनात सैनिकों के लिये योग कार्यक्रम की चर्चा की थी। हमारे संन्यासी सियाचीन बेस कैम्प और फिर फॉर्वर्ड लाइन में भी जाकर जवानों के साथ रहे। साथ रहते थे, साथ खाते थे, बमबारी होती थी तो साथ भागते थे। इस तरह जवानों के शरीर और मन की अवस्थाओं को उन्होंने जाना और फिर एक कार्यक्रम का विकास किया गया। वह कार्यक्रम सियाचीन बेस कैम्प में बहुत दिनों तक लागू किया गया। इसी प्रकार बीकानेर के रेगिस्तान में तैनात टैंक यूनिट के साथ भी काम हुआ। हमारे संन्यासी जवानों के साथ टैंक के भीतर गये, और उनकी समस्याओं को समझकर योग का एक कार्यक्रम तैयार हुआ। महू के सेना प्रशिक्षण केन्द्र में शार्प-शूटर्स को ट्रेनिंग दी गई, क्योंकि योग के माध्यम से एकाग्रता बढ़ती है।

जिस राज्य में हम हैं, बिहार, वहाँ भी एक बड़ा उत्साहजनक प्रयोग किया गया। पटना के बिहार रेजिमेंटल सेन्टर में कारगिल युद्ध से पहले हमलोगों ने एक योग यूनिट तैयार की थी। रेजिमेंटल सेन्टर में जो नये जवान भर्ती हुए थे, उन्हें दो भागों में बाँटा गया। पहला ग्रुप सामान्य मिलिट्री ट्रेनिंग से गुजरा और दूसरे ग्रुप ने केवल योगाभ्यास किया। आरम्भ में तो लोगों को बड़ा विचित्र लगा कि जो व्यक्ति योगाभ्यास कर रहा है, वह क्या अपनी शक्ति, अपनी ताकत, अपने स्टेमिना को बढ़ा पायेगा? जो सब काम एक जवान के जिम्मे होते हैं उन्हें वह कर पायेगा? लेकिन जब अन्त में परीक्षा हुई तो उसमें देखा गया कि जो मिलिट्री ट्रेनिंग ग्रुप था, उसमें 13 लोग फेल हुए जबकि योग ग्रुप से केवल 3 जवान पास नहीं हुए।

जब ये लोग तैयार हो गये तो कुछ समय बाद इन्हें कारगिल भेजा गया। युद्ध की यह घटना उसी समय आरम्भ हुई थी। सेन्ट्रल कमाण्ड द्वारा इन जवानों पर नजर रखी गई, यह देखने के लिए कि ये लोग विकट, तनावपूर्ण परिस्थितियों में कैसा परफॉर्म करते हैं। बाद में सेन्ट्रल कमाण्ड से हमें जो रिपोर्ट मिली, उससे मालूम पड़ा कि लम्बी मार्च के बाद जब जवानों को आराम करने की आवश्यकता होती थी और विश्राम करने के लिए औसतन एक घण्टा लगता था, वहीं योग यूनिट के जवान प्राणायाम करके, अपने श्वसन और हृदय गति को सामान्य करके पन्द्रह मिनट में विश्रान्त हो जाते थे और फिर आगे बढ़ने के लिये तैयार हो जाते थे। यह तो बहुत बड़ी उपलब्धि रही जिसको मॉनिटर किया गया था। युद्ध के बाद सेंट्रल कमाण्ड के एक वरिष्ठ अधिकारी मुंगेर आश्रम भी आए, वहाँ के प्रशिक्षकों को धन्यवाद देने के लिये।

योग के माध्यम से यह जो काम हुआ है वह निश्चित रूप से भारतीय सेना के लिये एक बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जो उपलब्धि हमलोगों को दिखलाई दी है और जो आँकड़े भारतीय सेना के पास उपलब्ध हैं, उनसे यह तो निश्चित साबित होता है कि योग हमलोगों के जीवन के लिये एक बहुत आवश्यक साधना है, चाहे हम किसी भी क्षेत्र में रहें। चाहे कोई सेना में हो या साधु हो या व्यवसायी हो या गृहिणी हो या विद्यार्थी हो या सेवानिवृत्त आदमी हो, हर वर्ग के लिये योग आवश्यक है।

बिहार योग परम्परा

बिहार योग विद्यालय की परम्परा की शुरुआत होती है स्वामी शिवानन्द सरस्वती से। वे योगी थे, साधु थे, लेकिन उनका प्रोफेशन डॉक्टर का था। जब स्वामी शिवानन्द जी देखते थे कि लोग विभिन्न प्रकार की समस्याओं को लेकर उनके पास आये हैं, तो उन्होंने इन समस्याओं के निराकरण के लिये योग को माध्यम बनाया। उन्होंने अपने संन्यासी शिष्यों से कहा कि तुम लोग समाज में योग का प्रचार करो,

क्योंकि योग के माध्यम से शारीरिक, मानसिक, एवं भावनात्मक रोगों से लोग मुक्त हो सकते हैं। उन्हीं के शिष्य थे स्वामी सत्यानन्द जी, जिन्हें आदेश मिला कि तुम योग का प्रचार घर-घर, द्वार-द्वार, नगर-नगर, डगर-डगर करो।

स्वामी सत्यानन्द जी ने स्वामी शिवानन्द जी के चिंतनों को आगे बढ़ाते हुए योग को एक व्यावहारिक और वैज्ञानिक रूप प्रदान किया। उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह, दमा, कैंसर और एच.आई.वी. जैसे अनेक रोगों पर अनुसंधान हुए जिन्होंने योग की वैज्ञानिकता को स्थापित किया। इस प्रकार के शोध बतलाते हैं कि शारीरिक या मानसिक रोगों से मुक्ति पाने के लिये योग एक बहुत उपयोगी प्रणाली है।

योग की इस उपयोगिता का रहस्य क्या है? एक शब्द में कहना हो तो वह है मन। एक वाक्य में बतलाना हो तो मैं कहूँगा कि मन एक ट्रेन की तरह है जिसका कभी-कभी एक्सीडेंट भी होता है, लेकिन वही मन क्रेन भी है जो उस ट्रेन को उठाकर फिर पटरी पर रख देता है। जीवन के व्यवहार बेशक शरीर द्वारा सम्पन्न होते हैं, लेकिन उनकी उत्पत्ति का केन्द्र है मन। मन रूपी ट्रेन को दो चीजें पटरी से उतार देती हैं—एक है टेंशन यानि तनाव और दूसरा है स्ट्रेस यानि परेशानी। टेंशन से स्ट्रेस उत्पन्न होता है। जब मन में स्ट्रेस और परेशानी होती है तो मन चंचल हो जाता है। चंचल मन फिर विक्षिप्त हो जाता है। महर्षि पतंजलि भी जब राजयोग की चर्चा करते हैं तो योग को तीन सूत्रों द्वारा पारिभाषित करते हैं। पहला, *अथ योगानुशासनम्,* योग एक शिक्षा है, व्यवस्था है, अनुशासन है, जीवनशैली है। इस योग से क्या होगा? *योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः* अर्थात् इस अनुशासन से तुम अपने चंचल चित्त को शान्त कर पाओगे। चंचल मन को शान्त करने के बाद क्या होगा? *तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्*—तब तुम्हें अपना वास्तविक ज्ञान होगा। तब तुम जान पाओगे कि तुम कौन हो। इन्हीं तीन सूत्रों में उन्होंने पूरे राजयोग को बाँधा है—अनुशासन, चंचलता का विरोध और अपनी जानकारी।

स्वान सिद्धांत द्वारा स्वयं की जानकारी

अपनी जानकारी का मतलब क्या होता है? यहाँ पर मैं आत्मा-परमात्मा की दृष्टि से नहीं, व्यावहारिक ढंग से समझाता हूँ। जब कभी अवसर मिले, कागज और कलम लेकर बैठ जाना और एक सिद्धांत, जिसे हम स्वान (SWAN) सिद्धांत कहते हैं, उसे अमल में लाना। S का मतलब होता है स्ट्रेंथ, सामर्थ्य। W का मतलब होता है वीकनेस, कमजोरी। A का मतलब होता है एम्बिशन, महत्त्वाकांक्षा और N का मतलब होता है नीड, आवश्यकता। अब आप कागज पर लिखो कि आप अपने में कौन-से सामर्थ्य देखते हो? संवेदनशीलता, करुणा, सहयोग—जो भी आप अपने सामर्थ्य के रूप में देखते हो, उसकी सूची बना लो। दूसरे कागज पर कमजोरियों को लिखो। इसी तरह अपनी महत्त्वाकांक्षाओ और आवश्यकताओं की भी सूची बना लो।

अब अपनी सूची का अवलोकन करो और एक कमजोरी को हटाने का प्रयास करो। उस पर कुछ सप्ताह या महीने काम करो, उसे अपने सामर्थ्य में परिवर्तित करने का प्रयास करो। इसी प्रकार अपनी महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं को देखो। महत्त्वाकांक्षाएँ तो अनेक प्रकार की होती हैं, लेकिन क्या वे वास्तव में आवश्यक हैं? वर्तमान की जो आवश्यकता और परिस्थिति है, उससे हमें समझौता करके चलना है। यह है स्वयं को जानने का, स्वयं को जीवन के उद्‌देश्यों के अनुरूप ढालने का प्रयास।

तनावमुक्ति के कारगर उपाय

दूसरा बिन्दु है उन तनावों को संभालना जो हमारे मन-मस्तिष्क को थका देते हैं, हमें विक्षिप्त और उत्तेजित कर देते हैं। इस मानसिक उत्तेजना को नियंत्रित करने के लिये योगाभ्यासों के चार वर्ग हैं–आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण और एकाग्रता। इन चारों प्रक्रियाओं को एक साथ जोड़कर योग का प्रभावी कार्यक्रम निश्चित किया जाता है।

यहाँ मैं कुछ ऐसे अभ्यासों का उल्लेख करूँगा जो आपलोगों के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। पहला है योगनिद्रा, जिसे लेटकर या बैठकर किया जा सकता है। इससे गहन शारीरिक एवं मानसिक शिथिलता की प्राप्ति होती है। यही अभ्यास करके कारगिल के जवान अपनी श्वसन-गति और हृदय-गति को सामान्य करते थे। किसी पेड़ या पत्थर के साथ टिककर बैठ गये और यह अभ्यास सहजता के साथ करने लगे।

दूसरा अभ्यास है भ्रामरी प्राणायाम, यह भी मानसिक तनाव को दूर करने के लिये बहुत कारगर है। हमारे मस्तिष्क में एक ग्रंथि है जिसे पीनियल ग्रंथि कहते हैं। इससे एक रसायन का उत्पादन होता है जिसे मेलाटॉनिन कहा जाता है। यह एक ऐसा रसायन है जो गहरी निद्रा की अवस्था में निकलता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि रात में दो से चार बजे के बीच दो घण्टे का एक ऐसा समय आता है, जब हम एकदम गहरी निद्रा में जाते हैं और उस गहरी निद्रा में मेलाटॉनिन का उत्पादन होता है। यह तभी होता है जब एकदम घुप्प अंधेरा हो। प्रकाश में इस रसायन का उत्पादन नहीं होता। इसकी मात्रा बहुत कम होती है, सुई की नोक पर एक छोटी-सी बूंद की तरह, और यही तत्त्व है जो हमें आराम देता है।

भ्रामरी प्राणायाम ऐसा अभ्यास है जो दिन में भी इस मेलाटॉनिन का स्राव करवा सकता है। इसलिये जब आप तनावग्रस्त हों, जब मन एकदम विचलित हो जाए और कुछ समझ नहीं आए कि हम क्या करें, तब उस समय अगर आप इस अभ्यास को कर लोगे, तो खुद आपको अनुभव होगा कि आपके मानसिक तनाव तुरंत घट जाते हैं। योग में प्राणायाम के अन्य अभ्यास भी हैं, लेकिन आप लोगों के लिये मैं इसे महत्त्व दे रहा हूँ क्योंकि यह ऐसा प्राणायाम है जिसके द्वारा आप अपने जीवन के तनावों से समझौता कर पाओगे। मुक्त तो नहीं होगे, क्योंकि यह परिस्थिति को बदलने वाला नहीं है। परिस्थिति नहीं बदलेगी, लेकिन आपके मन के भीतर जो प्रतिक्रिया हो रही है, तनाव उत्पन्न हो रहा है वह तुरंत शान्त हो जायेगा।

योग निद्रा और भ्रामरी प्राणायाम, इन्हें तनावमुक्ति और स्ट्रेस-मैनेजमेंट के लिये सबसे कारगर माना गया है। हमलोगों के अनुभव में सैनिकों के लिए एक और अभ्यास बहुत प्रभावी रहा है, जिसे हमलोग कहते हैं त्राटक। इसमें मोमबत्ती की लौ या किसी अन्य वस्तु को एकटक देखा जाता है। जब आँखें और खुली नहीं रखी जातीं तब आँखों को बन्द करके भीतर में उस वस्तु की छवि को देखते हैं। वह छवि बहुत बार हिलती है, घूमती है, उसे एक जगह पर फोकस करने का प्रयास करते हैं। यह अभ्यास एकाग्रता को बढ़ाने के लिये है। इसे आप नियमित रूप से करोगे तो एकाग्रता में आपसे कोई आगे नहीं बढ़ पायेगा। साथ ही यह हमारी आई-साइट, हमारी दृष्टिशक्ति को बेहतर बनाता है। हमने ऐसे कई लोगों को देखा है, जिन्होंने मात्र इसी अभ्यास को करते हुए अपने मस्तिष्क और आंखों की नसों की कमजोरी को दूर किया है और परफेक्ट आई-साइट को प्राप्त किया है। शिशिलीकरण और एकाग्रता के ये तीन सरल अभ्यास हैं जिन्हें आप सभी सहज रूप से कर सकते हैं।

–10 अक्टूबर 2015, नारंगी सेना छावनी, गुवाहाटी

योगोत्सव कार्यक्रम से सीख लेनी चाहिए

संपत मिश्र, गुवाहाटी

प्रिय संपादक,

गुवाहाटी शहर में सालभर कोई-न-कोई धार्मिक आयोजन होते ही रहते हैं। गत दिनों 8 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक गुवाहाटी गौशाला में बिहार योग विद्यालय के सौजन्य से आयोजित 'स्वयं को जानो' योगोत्सव जैसा आदर्श कार्यक्रम गुवाहाटी के इतिहास में न पहले कभी हुआ, न कभी हो पाएगा। बिहार योग विद्यालय के परमाचार्य स्वामी निरंजनान्द सरस्वती ने कार्यक्रम में हर पल लोगों को कुछ-न-कुछ दिया ही है, लिया नहीं। इतने बड़े आयोजन में न कोई दिखावा था और न ही कोई आडम्बर। मकसद सिर्फ योग का प्रचार था। कार्यक्रम में न ही कोई प्रवेश शुल्क था और न ही कोई दान की रसीद। हर आगंतुक की हर सत्र में कभी आकर्षक टी शर्ट, अंगवस्त्र तो कभी रुद्राक्ष माला व शिवशक्ति यंत्र भेंट देकर अगवानी की जाती थी। अंतिम दिन तो हजारों रुपए की उपयोगी पुस्तकें भेंट देकर आगंतुकों की अगवानी बिहार योग विद्यालय की ओर से की गई।

मंच पर न कोई कार्यकर्त्ता ही उपस्थित था और न ही कोई बड़ा नेता या सरकारी कर्मचारी। फूलों की माला या शॉल से न किसी का सम्मान हुआ और न ही समाज के किसी ठेकेदार का भाषण हुआ। सरल तरीके से स्वामीजी का

आगमन होता और प्राचीन भारतीय वाद्ययंत्रों के साथ भजन, महामृत्युंजय जप और दुर्गा नामावली का पाठ होता। स्वामीजी का प्रवचन शुरू होते ही लोग मंत्रमुग्ध होकर अपने आप ही अनुशासन से बैठे रहते। कहीं भी कोई बिल्ला लगाए हुए स्वयंसेवक नजर नहीं आ रहे थे। आयोजन स्थल पर न ही कोई कार्यालय व चंदे की रसीद या दान-पत्र नजर आ रहा था। कार्यक्रम में धनी-गरीब, छोटे-बड़े, किसी तरह का भेद-भाव नहीं था। पूंजीपति आगंतुक को जिस तरह से भेंट देकर स्वागत किया जता था उसके ड्राइवर का भी उसी तरह से स्वागत किया जा रहा था। सिक्यूरिटी गार्ड, कार्यरत पुलिस के जवान, साउंड सिस्टम, पंडाल, बिजली कर्मचारी सभी का एक ही तरीके से स्वागत किया जा रहा था। आडम्बरपूर्ण कार्यक्रम में उपस्थित रहने के आदी व ड्रेस कोड लागू कर महंगे कपड़े पहनने वाले इस कार्यक्रम में नदारद थे।

स्वामी निरंजनानन्द का सादगीपूर्ण व्यवहार स्वत: ही उनके चरण छूने को मजबूर कर देता था। स्वामीजी ने स्पष्ट कह दिया था कि उनके गुरु आदेशानुसार योग को व्यवसाय बनाने के पक्ष में वे नहीं हैं। श्रद्धालु स्वेच्छा से अनुदान दें तो ठीक है, वरना वे मांगकर लेते नहीं, बल्कि देते ही हैं। ऐसा गरिमापूर्ण कार्यक्रम सतयुग, त्रेतायुग व द्वापरयुग के संन्यासियों की याद दिला देता है। स्थानीय कार्यकर्ताओं को ऐसे आयोजन से सीख लेनी चाहिए। ऐसे आदर्श आयोजनों का स्वागत होना चाहिए।

– 'दैनिक पूर्वोदय' समाचारपत्र से साभार

सत्यम् वाणी

गाँवों में ज्यादातर लड़कियों में अब तक भी पढ़ाई का शौक नहीं है। इनको पता नहीं है कि पढ़ाई से इनका भविष्य सुरक्षित होगा। इन लोगों के दिमाग में घुसा हुआ है कि स्त्री की सबसे अधिक सुरक्षा विवाहित जीवन में है। शहरों में वातावरण कुछ बदल रहा है। लड़कियाँ समझने लग गई हैं कि उनकी सुरक्षा शिक्षा और नौकरी-पेशे में भी हो सकती है। स्वावलम्बन की भावना अगर लड़की के दिमाग में चली जाए तो बहुत कुछ हो सकता है, क्योंकि लड़कियाँ बहुत अच्छे नम्बर लेकर पास हो सकती हैं। शहरों में जो परीक्षाएँ होती हैं उनमें लड़कियों का परिणाम बहुत अच्छा निकलता है।

लड़कियों के मन में हजारों सालों से एक चीज घुसी हुई है कि उनका भविष्य विवाह है और यही बात हमलोग उनके मन में डालते हैं। विवाहित जीवन भविष्य का एक संस्कार है जो प्राय: सबको करना है, लेकिन विवाहित जीवन ही लड़की का भविष्य हो, यह सम्पूर्ण सच नहीं है, आधा सच है। यह बात अगर लड़कियाँ जल्दी नहीं समझेंगी तो आगे जाकर उन्हें मौका नहीं मिलेगा। अभी तो लड़कियों को बहुत सुविधाएँ मिल रही हैं, नौकरियों में बहुत-सी सुविधाएँ मिलती हैं। आगे जाकर बन्द हो जायेंगी, फिर मर्दों से टक्कर लेनी होगी।

इसलिए लड़कियों के मन में शिक्षा के प्रति सद्भाव और उत्साह, यह दोनों देना माता-पिता का कर्तव्य है। हमारे शास्त्र इस बात पर जो जोर देते हैं, उसे हमलोग भूल गए हैं। हमारे वैदिक धर्म में, जिसे आप हिन्दू धर्म कहते हैं, विवाह का चुनाव लड़की पर छोड़ा गया है, माता-पिता पर नहीं। हमारे धर्मशास्त्र कहते हैं कि लड़की को स्वयं वर-वरण का अधिकार है। स्वयंवर का यही मतलब होता है, खुद चुनना। लड़की चुनती है खुद। प्राचीन काल में तो होता ही था, कथाओं में पढ़ा होगा। उस स्वयंवर के भी अलग-अलग तरीके होते थे। कहीं पर मत्स्यभेदन होता था, कहीं पर धनुष यज्ञ होता था।

मेरे कहने का तात्पर्य यही है कि हालाँकि विवाह समाज का एक बहुत बड़ा आधार है, समाज की अत्यंत अनिवार्य क्रिया है, पर फिर भी केवल यही लड़की का भविष्य नहीं है। नहीं, आने वाले युग में लड़की का भविष्य सिर्फ विवाह नहीं हो सकता।

हर धर्म, हर समाज, हर व्यक्ति को अपनी आलोचना सुनने की आदत होनी चाहिए। कबीरदास जी कहते थे, 'निन्दक नियरे राखिये'। आखिर दुनिया में किसी ने अपना चेहरा तो देखा नहीं है। अगर देखा है तो किसी दूसरे या दर्पण के सहारे। अगर दूसरा नहीं होता या दर्पण नहीं होता तो पता ही नहीं लगता अपना चेहरा कैसा है। सन्त-महात्मा कहते हैं कि जिस तरह से मनुष्य अपना चेहरा नहीं देख पाता है

उसी तरह से मनुष्य अपने स्वभाव को भी नहीं देख पाता है। आपको अपने विचारों की थोड़ी बहुत जानकारी हो सकती है, मगर आपको अपने मन की जानकारी नहीं है। किसी को भी नहीं है। मनोवैज्ञानिक भी यही कहते हैं। मनुष्य अपने विचारों को भले ही थोड़ा-सा देख ले, पर एक चीज है मन, जिसे कोई नहीं देख सकता है।

स्वामीजी, मुझे समस्या है। मैं सत्संगों में जाता हूँ, यहाँ भी आता हूँ, मगर मन्दिर नहीं जाता। वहाँ जो पण्डे-पुजारी होते हैं, उनसे एलर्जी होती है। मन्दिर में जो पैसा माँगते हैं मुझे देने की इच्छा नहीं होती। अमरकंटक गया, वहाँ भी मन्दिरों में पैसा देने की इच्छा नहीं हुई, पर वहाँ जो यात्री थे उनकी सेवा करने की इच्छा रही। यह समस्या क्या है मुझे समझ में नहीं आती?

हर एक आदमी का अपना-अपना विचार और विश्वास होता है। बहुत-से लोग मन्दिर में प्रसाद लेकर पैसा चढ़ाने में संकोच नहीं करते, और बहुत-से लोग चाहेंगे कि पैसा यहाँ न देकर बाहर गरीबों को दिया जाए। यह अपना-अपना विचार है। सबके विचार अगर आप ही की तरह हों, या सभी के विचार केवल मेरी तरह हों तब तो समाज चलेगा नहीं। हमारा मन्दिर बनाने का मन करता है, पर तुम कहोगे मन्दिर बनाकर क्या करोगे, अस्पताल या अनाथालय बनाओ। तुम भी ठीक कहते हो, मगर सारे लोग अनाथालय ही बनाते जाएँगे तो बीमार लोग कहाँ जाएँगे? सब लोग अस्पताल के लिये चन्दा दें तो फिर अनाथ लोग कहाँ जाएँगे? समाज को मन्दिर की भी आवश्यकता है, अस्पताल, अनाथालय और धर्मशाला की भी जरूरत है, और साथ ही समाज के लोगों को होटल की भी जरूरत है।

हमारे वैदिक धर्म में अर्थशास्त्र जुड़ा है। अर्थशास्त्र के बिना न तो धर्म का महत्त्व है, न मोक्ष का, न ही समाज का। जब पैसा ही नहीं रहेगा तो समाज कैसे चलेगा? आपने अभिषेक के लिए इक्यावन किलो दूध ले लिया, किसी का दूध बिक गया, छः-सात सौ रुपये की कमाई हो गई। भगवान की पूजा की जितनी हमें आवश्यकता है उतनी ही उन लोगों की पेट-पूजा की आवश्यकता है। भगवान की पूजा करके अगर किसी की पेट-पूजा न करवा सकें तो भगवान की पूजा बेकार है। हिन्दुस्तान के मंदिरों में लोगों के जाने से लाखों-करोड़ों लोगों का पेट-पालन होता है। अगरबत्ती बिकती है, केला बिकता है, माला बिकती है, दोना बिकता है, धूप बिकता है, सिन्दूर बिकता है, पेड़ा बिकता है। अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष—ये चार पुरुषार्थ हमारे धर्म में बताये गये हैं। जैसे सब्जी में नमक, हल्दी, जीरा और पानी भी मिला-जुला रहता है, वैसे ही ये चारों पुरुषार्थ एक-दूसरे से मिले-जुले हैं।

समाज में केवल मन्दिर की जरूरत नहीं है। मन्दिर समाज का एक क्षेत्र मात्र है। कई लोग मरते समय अपना पैसा तालाब वगैरह बनाने के लिये दान दे जाते हैं। कोई धर्मशाला के लिए दे जाते हैं, बहुत-से लोग अस्पताल के लिए दे जाते हैं। बहुत लोग किसी ट्रस्ट को दे जाते हैं अच्छे विद्यार्थियों की छात्रवृत्ति के लिए। समाज की अनेकों आवश्यकताएँ हैं। इसमें आपका एक विचार है, उनका विचार दूसरा है, सबका विचार अलग है।

हर एक आदमी अपना एक विचार लेकर पैदा होता है। यमुनोत्री का मन्दिर सन् 1988 में बाढ़ आने से बह गया तो एक जन ने करोड़ों रुपये देकर मन्दिर बनवा दिया। ठीक है, हजारों मिस्त्रियों को काम मिला। आखिर हम या आप जो मन्दिर जाते हैं पर्यटक बनकर थोड़े ही जाते हैं। वहाँ तो हम देवता की शरण में जाते हैं, देवता से कुछ याचना करने के लिये जाते हैं, देवता को कुछ समर्पण करने को जाते हैं।

समर्पण के भाव से जाएँ और उनका उल्टा-सीधा व्यवहार हो, तो व्यवहार देखकर मन नहीं करता मन्दिर जाने को।

व्यवहार के बारे में आपका अपना नज़रिया भी तो हो सकता है। अगर आपका बस चले तो मुफ्त में पूजा करवाकर आ जाइयेगा, साथ में प्रसाद भी लेते आइयेगा। मगर हम कहते हैं कि नहीं, हम भगवान को कुछ नहीं दे रहे हैं। हम भगवान के नाम पर दे रहे हैं और दे रहे हैं इसी जनता को। एक बूढ़े पण्डे को पचास रुपये मिल गये, इससे उसके बच्चे पढ़ेंगे। फूलवाली के फूल बिक गए सौ-पचास, उसके बच्चे पढ़ेंगे। भगवान को न तो केले की जरूरत है, न फूल की और न ही गंगा जल की, क्योंकि वही तो सबको देने वाला है। चन्द्रमा और सूर्य उसकी आँखें हैं, दीपक हैं। अब जिसके पास इतने बड़े दीपक हों, उसकी तुम आरती करो, कितनी अचरज की बात लगती है!

जब हम मन्दिर में जाते हैं, तो वहाँ अपनी भावना समर्पित करते हैं। अपनी कंजूसी समर्पित करते हैं, अपने छोटेपन को समर्पित करते हैं। मनुष्य की सबसे बड़ी कमजोरी क्या है? छीनना-झपटना ही मनुष्य का काम है, वह देता कुछ नहीं। केवल टट्टी और पेशाब करता है। दुनिया में जितने भी अन्य जीव हैं, जितने भी पशु-पक्षी हैं, वे निस्संकोच देते हैं। गाय दूध देती है, मुर्गी अण्डा देती है, मगर मनुष्य छीना-झपटी करता है। यही उसकी सबसे बड़ी कमजोरी है।

दुनिया में जितने भी जीव हैं वे परमार्थ के लिये जीवित रहते हैं, जबकि मनुष्य स्वार्थ के लिये जीवित रहता है। मरने के बाद भी उसका कोई काम नहीं आता है। घरवाले कहते हैं इसे जल्दी निकालो, पता नहीं भूत बनकर खा जाएगा! अब इस स्वार्थी इन्सान को परमार्थ की ओर मोड़ने के लिए शास्त्रों ने देने का तरीका बताया। मन्दिर को दो, गरीब को दो, अन्धे को दो, कोढ़ी को दो। दूसरे को देना, यह मनुष्य का धर्म होना चाहिए।

वैसे जो मन्दिर जाते हैं न, सब बीमार हैं। जैसे शरीर का बीमार अस्पताल जाता है, वैसे मन का बीमार मन्दिर जाता है। मन की बीमारी क्या है? चिन्ता, शोक, भय—अभी ये तीन मन की बीमारियाँ बता रहा हूँ, पर मन की और भी कई बीमारियाँ हैं, जिन्हें रामचरितमानस में मानस रोग कहा गया है। तीन-तीन मानसिक बीमारियों से ग्रस्त प्राणी कहाँ जाएगा? डॉक्टर के यहाँ जाएगा, अथवा वैद्यनाथ, बद्रीनाथ या केदारनाथ जाएगा? मन की बीमारी का इलाज केवल भगवान के दर्शन, पूजा, आराधना और शरणागति में है।

अब सवाल यह है कि जिस मन्दिर में तुम जा रहे हो, आखिर उस मन्दिर का भी कोई ढाँचा है, कुछ प्रशासन है, व्यवस्था है, रोशनी है, दरवाजे हैं। उन्हें कौन देखेगा? जो देखेगा उसका घर कैसे पलेगा? इसलिए हमारी परम्परा ने कहा कि ठीक है, मन्दिर में कुछ चढ़ा दो। सबको कुछ-न-कुछ मिल जाएगा। जो द्वारपाल है उसे पाँच सौ रुपया महीना मिल जाएगा। पुजारी जी पढ़े-लिखे हैं, उन्हें दस-पन्द्रह हजार रुपया महीना मिल जाएगा। यह व्यवस्था हमारे ऋषि-मुनियों ने की, अन्यथा भगवान को कुछ नहीं चाहिए। ईश्वर समर्पण, प्रेम और भक्ति के अलावा तुमसे और कुछ नहीं चाहते।

मंदिर को चलाने के लिए पैसे की जरूरत तो पड़ती ही है, और वह पैसा कहाँ से आएगा? तुम और हम देंगे न? आप अखबार का ग्राहकी शुल्क देते हो, क्लब का सदस्यता शुल्क देते हो, पर मन्दिर का शुल्क देते हो? नहीं। हाँ, मैं यह मानने के लिये तैयार हूँ कि कुछ चीजों के कारण हमारे मन्दिरों के कर्मकाण्ड अव्यवस्थित हो गए हैं। ठीक से मंत्र-पाठ नहीं करते, ठीक से रहते नहीं, आदतें थोड़ी खराब हैं, मंदिर गंदा है। इन कमियों को हम स्वीकार करते हैं, मगर मंदिरों की आवश्यकता ही नहीं, ऐसी बात नहीं। अगर भगवान के पास जाएँ और सिर्फ नमस्कार करके आ जाएँ तो पुजारी भूखा मर जाएगा!

बहुत-से लोगों को मन्दिर में जाने से आराम मिलता है, शान्ति मिलती है। आत्म-विचार होता है, कुछ बुराइयाँ हटती हैं। मगर कई लोगों को इसकी जरूरत नहीं है, वे नहीं जाते हैं। उन्हें केवल देखना, हरे-भरे मैदानों और ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों की खुली हवा में सैर-सपाटा पसन्द है। अब ऐसे लोगों के लिये समाज में कुछ होना चाहिए। हमारे समाज में विभिन्न आवश्यकताओं वाले लोग रहते हैं और उनके लिये हमें विभिन्न चीजों का, विभिन्न स्थानों का इन्तजाम करना होगा। केवल मन्दिरों से काम नहीं चलेगा। बहुत-से लोगों को एकान्त और शान्त स्थान चाहिए। मनाली में चारों ओर ऊँचे पहाड़ हैं, कोई मकान नहीं है, नीचे नदी बहती है। अपने बीवी-बच्चों को लेकर वहाँ पर चले जाओ और पन्द्रह-बीस दिन बिताओ। कुछ यह करो, कुछ वह करो और चार-पाँच हजार रुपया खर्च कर लो। खर्चा किए बिना अर्थशास्त्र लंगड़ा हो जाता है।

अर्थशास्त्र का आखिर रहस्य क्या है? जेब से पैसा निकालो। समृद्धि का अर्थ सिर्फ कमाना नहीं होता, खर्चा करना भी होता है। यह अर्थशास्त्र है। तुम किसी से शॉल खरीदोगे, किसी होटल में जाओगे तो किसी की आमदनी होगी। किसी से साड़ी खरीदोगे तो किसी की साड़ी बिकेगी और कल उसकी ही बीवी के लिए साड़ी खरीदी जाएगी। समृद्धि का रहस्य है खर्चा करो, बैंक में मत रखो। बच्चों के लिए बैंक में जमा करके रखना फालतू बात है। यह बात हमेशा के लिए याद रख लो। समृद्धि का रहस्य पैसा जमा करना नहीं, बल्कि पैसा खर्च करना है। सोना-चाँदी, हीरा-मोती लॉकर में जमा करके रखने का मतलब है अर्थव्यवस्था को लंगड़ा कर देना।

जब तक आदमी खर्चा नहीं करेगा उसे आमदनी का ख्याल ही नहीं आएगा। घर में दस तोला सोना पड़ा हो, बैक में पैसा पड़ा हो, दो-चार मकान किराए पर दिये हों तो आदमी का संघर्ष ही खत्म हो जाता है। जिस जाति में संघर्ष नहीं होता वह जाति कभी उठ नहीं सकती। जो आदमी संघर्ष करता है वही उठता है। संघर्ष मनुष्य के भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन के लिए, आनन्द की प्राप्ति के लिए अति आवश्यक है। एक उदाहरण देता हूँ। गर्मी के दिन तीन मील चलकर आओ और कोई तुम्हें ठण्ढा पानी पिलाए तो बहुत अच्छा लगेगा। लेकिन ठण्ढे कमरे में बैठे हो

और कोई तुम्हें बुलाए कि आकर पानी पी लो तो कहोगे, अभी नहीं पीना है। पानी का मजा तब जब प्यास लगे। शीतलता का आनन्द तभी ले सकते हो जब गर्मी लगे।

संघर्ष चाहे व्यापार में हो या व्यवसाय में, चाहे राजनैतिक जीवन में हो या पारिवारिक जीवन में, जो आदमी संघर्ष करना नहीं चाहता, उसके लिए सब रास्ते बन्द रहते हैं। जिन जातियों ने संघर्ष करना छोड़ा उन लोगों का क्या हुआ? यूनान मिट गया, रोम मिट गया, मिस्र मिट गया। हिन्दुस्तान भी मिट गया। हिन्दुस्तान की सभ्यता किसी समय बहुत ऊँची थी, दुनियाभर के लोग यहाँ आते थे। इसे तो सोने की चिड़िया कहा जाता था। पर मिट गया। क्यों मिटा? संघर्ष खत्म। यहाँ पानी है, यहाँ छ: मौसम होते हैं। यहाँ के लोगों को कुछ संघर्ष नहीं करना पड़ता है। कुछ मिल जाता है, सालभर निकाल लेते हैं किसान लोग। महीने में चार-पाँच सौ कमाई हो जाती है, महीना निकाल लेते हैं। यूरोप में छ: महीने बर्फ पड़ती है। ग्रीनहाउस में सब्जी उगानी पड़ता है। चौबीस घण्टे गर्म कपड़े पहनने पड़ते हैं। हर कमरे में हीटर रखना पड़ता है। कैरोसीन चूल्हा नहीं जला सकते। यह सब संघर्ष उनको करना पड़ता है।

लेकिन यह भी तो कहा जाता है कि संघर्ष के बजाय संतोष करना चाहिए।

संतोष का मतलब क्या होता है, वह बाद में बताऊँगा, पहले संघर्ष को समझना होगा। संघर्ष का मतलब होता है निरंतर घर्षण। परिस्थिति इधर को जा रही है और तुम उधर को जा रहे हो, उसे कहते हैं संघर्ष। प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाना, यह संघर्ष है। रही बात संतोष की, जिन-जिन जातियों में संतोष का पाठ पढ़ाया वे सब जातियाँ आज गरीब हैं। केवल गरीब ही नहीं, पिछड़ी भी हैं। केवल पिछड़ी नहीं, अपाहिज हो गई हैं। यह हालत है। बीसवीं शताब्दी खत्म हो रही है, इक्कीसवीं शताब्दी शुरू हो रही है, पर यहाँ सत्तर प्रतिशत लोगों के लिए ठीक-सा शौचालय नहीं है। उनको संतोष है क्या? नहीं, उनको इस स्थिति में रहना पड़ रहा है, इसलिए रह रहे हैं। सुबह चार बजे उठकर जंगल में टट्टी करने जाते हैं, करना पड़ रहा है। हम इसको संतोष नहीं कहते।

हम संतोषी हैं। क्यों? इसलिए कि हमारी कोई इच्छा ही नहीं है। संतोष उसे होना चाहिए जिसकी कोई इच्छा न हो। इच्छाओं के रहते उन्हें दबाना संतोष नहीं, दमन है। तुम पड़ोसी का टीवी देखते हो, उसकी मोटरसाईकल देखते हो, उसके गहने देखते हो, उसका घर देखते हो, तुम्हारे मन में भी इच्छा होती है, बीवी-बेटे से बात भी करते हो। तब कहो संतोष कहाँ गया? यह सब पाखण्ड है, ढोंग है।

कहते हैं संतोष से मानसिक शान्ति मिलती है।

वैसा संतोष तो करना ही पड़ता है। उस संतोष को दूसरे शब्दों में कहेंगे मन मार के रहना। तुमने किसी से कुछ माँगा, उसने कहा, नहीं। तब तो मन मारकर बैठना

ही पड़ेगा। ऐसा संतोष, इच्छाओं को दबाना है, और कुछ नहीं। जब तक तुम्हारे मन में इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, लालसाएँ और कामनाएँ हैं तब तक संतोष नाम की कोई वस्तु नहीं है। संतोष एक स्वाभाविक अवस्था है, जो तब आती है जब इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं। नहीं, इच्छाएँ खत्म नहीं होती हैं, उनका रूप बदल जाता है। जो इच्छाएँ पहले व्यक्तिगत जीवन को लेकर होती हैं कि मेरी गाड़ी हो, मेरा घर हो, मेरी सम्पत्ति हो, मेरा यह हो, मेरा वह हो, जब वे दूसरों के लिए होने लगती है, जब आदमी दूसरों के बारे में सोचने लगता है, तब उसको संतोष की प्राप्ति होती है, वरना नहीं होती। यह हम अपने अनुभव से कह रहे हैं।

इच्छा मनुष्य की विशेषता है। जिसको इच्छा नहीं होगी वह तो पागल है, मूढ़ है। इच्छा मनुष्य की पहचान है। इच्छा का मतलब क्या होता है? कुछ प्राप्त करने का मन, कुछ खाने का मन, किसी जगह जाने का मन, किसी से प्रेम करने का मन, किसी से मिलने का मन, किसी किताब को पढ़ने का मन, मन्दिर में जाने का मन, तीर्थयात्रा करने का मन, इंग्लैंड देखकर आने का मन—इसको कहते हैं इच्छा। उसकी साड़ी बहुत बढ़िया है, हमारे पास भी हो, इसको कहते हैं इच्छा। आकांक्षा, अभीप्सा, लालसा, महत्त्वाकांक्षा—ये इच्छा के अलग-अलग नाम हैं। महत्त्वाकांक्षा क्या है? हम विधायक बन जाएँ, विश्वविद्यालय के कुलपति बन जाएँ, अखबारों में हमारी तस्वीर छपे, हमारी किताब पाँच लाख बिके, इसे कहते हैं महत्त्वाकांक्षा—महत्त्व की आकांक्षा।

इच्छा मनुष्य के जीवन का सपना है, इसे खत्म नहीं करना चाहिए। इसलिये संतोष की बात तो करो ही मत। जो भी संतोष के बारे में बोलता है वह केवल राजनीति है। संतोष हो तो बहुत अच्छा, मगर संतोष है क्या? मन को मारना संतोष नहीं है। संतोष का मतलब है, मुझे जो चीज मिल गई है, मेरे लिये उतनी ही ठीक है। बाकी सब दूसरों के लिए है। माँ क्या करती है? बच्चे को खाना देती है, पति को खाना देती है, सास-ससुर को खाना देती है, और जो बचता है खाती है। उसे कष्ट होता है क्या? वह सच्चा संतोष है। *क्रमशः*

—10 नवम्बर 1997, रिखिया

पाचन समस्याओं में मन की भूमिका

स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

अपचन एक मनोकायिक रोग है, अर्थात् इसकी जड़ें तो मन में होती हैं, मगर यह फलता-फूलता शरीर में है। पाचन-संस्थान और मन के आपसी सम्बन्ध को इस तथ्य द्वारा सरलतापूर्वक समझा जा सकता है कि जब हमें भूख का अनुभव होता है तब भोजन के विचार मात्र से ही लार टपकने लगती है और पाचक रसों का स्राव होने लगता है। और जैसे ही पेट भरता है, मन भी तृप्त हो जाता है। मन में निराशापूर्ण विचार आने से भूख कम हो जाती है और पेट भी भारी-सा लगने लगता है। इसी प्रकार भय के कारण पेट में एक प्रकार के स्फुरण का अनुभव होता है।

मन और शरीर एक-दूसरे से इस प्रकार जुड़े हैं कि मानसिक द्वन्द्व का सीधा प्रतिबिम्ब किसी-न-किसी रूप में शरीर पर दृष्टिगोचर होता है और शारीरिक अवस्था मन पर प्रतिबिम्बित होती है। यही कारण है कि छोटी-बड़ी सभी प्रकार की मानसिक समस्याएँ शरीर को दुर्बल बनाती हैं। इस सन्दर्भ में पाचन-संस्थान सबसे अधिक संवेदनशील अंग है। यह दुर्बलता कभी-कभी अपच तथा कष्ट के अनुभव से आरम्भ होती है और शीघ्र ही अधिक गम्भीर रोग का रूप धारण कर लेती है।

आमाशय और तनाव

मन का शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है, इस पर जो शोध हुए हैं उनमें पाचन-संस्थान के अन्य अंगों की अपेक्षा आमाशय प्रमुख विषय रहा है। सन् 1833 में डॉक्टर बीमॉण्ट ने बन्दूक की गोली से घायल एक मरीज का अध्ययन किया और पाया कि भावनात्मक असन्तुलन के समय आमाशय की परत लाल हो जाती है। मरीज के आमाशय में गोली लगी थी, उसका घाव ठीक से भरा नहीं था और पेट में एक छिद्र रह गया था। उसी छिद्र से डॉक्टर बीमॉण्ट ने भूख, दर्द, निराशा, क्रोध, प्रसन्नता, दु:ख तथा सन्तोष आदि विभिन्न भावनात्मक अवस्थाओं में रोगी के आमाशय का अध्ययन किया एवं उससे होने वाले स्राव को संग्रहित किया।

कुछ नवीनतम तथ्यों से पता चला है कि जो विद्यार्थी परीक्षा को बहुत बोझ समझते हैं, उनके भीतर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का स्राव बढ़ जाता है, जिसका क्षयकारी प्रभाव सम्भवत: पेप्टिक अल्सर का प्रमुख कारण है। तनावपूर्ण साक्षात्कार से व्यक्ति के भीतर उत्पन्न चिन्ता एवं विद्वेष की भावना के समय किये गये परीक्षणों से इन्हीं तथ्यों की पुष्टि हुई।

शायद अल्सर का प्रत्येक रोगी और चिकित्सक मानसिक तनाव और अल्सर के आपसी सम्बन्ध को समझता है। अल्सर मनोकायिक रोग का एक प्रत्यक्ष उदाहरण

है। एक अनुमान के अनुसार हर दसवाँ अमरीकी अपने जीवन में कभी-न-कभी पेप्टिक अल्सर का शिकार होता है। इनमें से अधिकतर अति व्यस्त लोग होते हैं, विशेषकर कठिन प्रतिद्वन्द्वतापूर्ण व्यवसायों में काम करने वाले। टैक्सी ड्राइवरों की तरह निरन्तर तनावपूर्ण कार्य करने वालों में सामान्यत: अल्सर अधिक देखा गया है।

अमेरिका में ब्राउन विश्वविद्यालय के सिडनी क्रॉब ने तुलनात्मक अध्ययन में यह देखा कि कम तनावयुक्त वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा हमेशा तनाव में रहने वाले हवाई यातायात नियंत्रकों में अल्सर, उच्च रक्तचाप तथा मधुमेह अधिक पाया जाता है। उन्होंने डीट्रॉइट में किये गये एक अध्ययन में यह भी देखा कि नौकरी से निकाले गये कर्मी प्राय: अल्सर से पीड़ित हुए। अन्य बर्खास्त कर्मियों में कैंसर, गठिया, उच्च रक्तचाप, मद्यपान और गाउट के लक्षण प्रकट हुए।

अमेरिका के रॉकफेलर विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक तथा स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र विशेषज्ञ नील मिलर कहते हैं-'इसके यथेष्ट प्रमाण हैं कि तनावपूर्ण परिस्थितियों में रहने वाले लोगों, जैसे सैनिकों के आमाशय में घाव हो जाते हैं। प्रायोगिक प्रमाणों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है कि पशुओं को तनावपूर्ण परिस्थितियों में रखा जाए तो उनका आमाशय क्षतिग्रस्त हो जाता है।' वाल्टर रीड आर्मी इन्स्टीट्यूट ऑफ रिसर्च (अमेरिका) के जॉन मेसन का कथन इस प्रकार है-'ऐसे आँकड़ों की कमी नहीं है जो रोग और मनोवैज्ञानिक कारकों के सम्बन्ध को सिद्ध करते हैं। कमी है तो इस ज्ञान की कि ये कारक अपना प्रभाव कैसे दिखलाते हैं।'

उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में अब रोगों में मनोकायिक कारकों की भूमिका स्पष्ट करने के लिए विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं तथा अलग-अलग प्रकार के व्यक्तित्वों पर परीक्षण किये जा रहे हैं। पाचन सम्बन्धी समस्याओं के क्षेत्र में, ईर्ष्या को अल्सर का, क्रोध को अति अम्लता तथा अजीर्ण (डिस्पेप्सिया) का, लालच को मोटापे का, बेचैनी को डायरिया का तथा परिग्रह की प्रवृत्ति को कब्जियत का मुख्य कारण माना जाता है। अन्य रोगों को लें तो पाते हैं कि कैंसर का शिकार प्राय: वे लोग होते हैं जो बचपन में माता-पिता से दूर रहे तथा अपनी वास्तविक भावनाओं को छिपाने का प्रयास करते रहे। ऐसे लोग अति तनावपूर्ण स्थिति में भी 'सब ठीक है' कह देते हैं। हृदय रोग का कारण इसके सर्वथा विपरीत है। ऐसे रोगी स्वयं को बेहद तनाव के बोझ तले दबा अनुभव करते हैं, जबकि वस्तुत: वे उतनी तनावपूर्ण स्थिति में नहीं होते। गठिया के रोगियों को, विशेषकर महिलाओं को यह रोग अभावग्रस्त बचपन के कारण उत्पन्न अपूर्ण महत्त्वाकांक्षाओं के कारण होता है। इनमें से अधिकांश रोग किसी मानसिक आघात के बाद ही उत्पन्न होते हैं।

पिछले वर्षों में यह तथ्य अधिक स्पष्ट हो गया है कि अधिकांश रोगों का मूल कारण विभिन्न प्रकार के मानसिक तनाव ही होते हैं। तनाव या परेशानी होने पर हमारी जो आन्तरिक प्रतिक्रिया होती है, उसी के कारण उनका हम पर इतना

अधिक प्रभाव पड़ता है। हेन्स सेली ने अपनी पुस्तक 'स्ट्रेस विदाउट डिस्ट्रेस' में लिखा है-'तनाव उत्पादक क्लिष्ट हैं अथवा अक्लिष्ट, यह बात उतनी मायने नहीं रखती। उनका तनावकारी प्रभाव शरीर की उनके प्रति ग्रहणशीलता पर निर्भर रहता है। मानसिक चिंता, कुण्ठा, असुरक्षा तथा लक्ष्यहीनता सबसे घातक तनाव उत्पादक हैं और अनेक मनोकायिक शोधों ने यह प्रमाणित किया है कि किस प्रकार ये सिरदर्द, पेप्टिक अल्सर, हृदय-रोग तथा उच्च रक्तचाप आदि के कारण बनते हैं।'

मन कैसे शरीर को प्रभावित कर पाचन सम्बन्धी रोग उत्पन्न करता है, यह शरीर, मन तथा उनके अन्तर्सम्बन्ध का विषय है। रोग को समूल नष्ट करने तथा उसके पुनर्प्रकोप को रोकने अथवा शरीर के किसी अन्य क्षेत्र में जड़ जमाने से रोकने हेतु सर्वप्रथम हमें विचार के भावना पर और भावना के शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों को समझना होगा।

मन और शरीर का सम्बन्ध

पाचन संस्थान मन को प्रतिबिम्बित करने वाला अति संवेदनशील दर्पण कहा जा सकता है, क्योंकि यह लगभग पूर्णत: स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र के प्रभाव में रहता है, जिसका नियन्त्रण मस्तिष्क के लिम्बिक क्षेत्र से होता है। भावनात्मक एवं मानसिक प्रक्रिया सीधे मस्तिष्क के लिम्बिक क्षेत्र पर प्रभाव डालती है और स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र के माध्यम से आमाशय और पाचन-संस्थान को प्रभावित करती है।

यदि आप आँत के एक टुकड़े को शरीर से निकालकर उपयुक्त वातावरण में रखेंगे, जहाँ उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती हो तो वह जीवित रहेगा और लयबद्ध रूप से निरन्तर संकुचित और अनुशिथिलित होता रहेगा। इस वातावरण में वह एक स्वतन्त्र जीव की तरह कार्य करेगा, क्योंकि प्रकृति ने उसे स्वतन्त्र तन्त्रिका आपूर्ति प्रदान की है, जो उसकी लयबद्ध धड़कन का कारण है। यह धड़कन ठीक उसी तरह की होती है जिस प्रकार हृदय की मांसपेशियाँ अपने आन्तरिक विद्युतीय क्रियाकलापों के कारण संकुचित और अनुशिथिलित होती हैं।

शरीर के संदर्भ में जब उपर्युक्त प्रक्रिया पर दृष्टिपात् करते हैं तो नियन्त्रण करने वाले अन्य कारक सामने आते हैं। इनमें मुख्य नियन्त्रक है मन-मस्तिष्क समूह।

मस्तिष्क शरीर के अंगों को स्नायुओं के द्वारा संदेश भेजता है। चूँकि पाचन-संस्थान हमारे शरीर की सबसे प्राचीन प्रणालियों में से है, इस पर चेतन नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं है, मात्र अचेतन नियन्त्रण पर्याप्त है और यह नियन्त्रण स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र द्वारा किया जाता है।

वैसे तो स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र की अनुकम्पी और परानुकम्पी शाखाओं की कार्य-प्रणाली परस्पर विरोधी है, परन्तु स्वस्थ व्यक्ति में वे एक-दूसरे की पूरक भी हैं। परानुकम्पी तन्त्र शान्त अवस्था में प्रभावी होता है। यह पाचक रसों का स्राव करता है, क्रमानुकुंचन को तीव्र करता है तथा अवरोधिनियों को खोलता है। अनुकम्पी तन्त्र ठीक इसके विपरीत कार्य करता है। ये रेडियो के टोन और वॉल्यूम को कंट्रोल करने वाले डायल की तरह हैं, जो आवाज को घटाते-बढ़ाते तो हैं, परन्तु प्रोग्राम में कोई फेर-बदल नहीं करते। इन दोनों तन्त्रों को एक ही सिक्के के दो पहलू कहा जा सकता है। ये दोनों एक-दूसरे पर निर्भर रहते हैं। सुचारु एवं प्रभावकारी ढंग से कार्य करने हेतु इनमें सन्तुलन आवश्यक है। इनमें असन्तुलन का दु:खद परिणाम होता है रोग।

मन शरीर का अवलम्बन लेकर उसके साथ सामंजस्यपूर्वक कार्य करता है। यह विशेष रूप से लिम्बिक संस्थान पर प्रभाव डालता है, जो हाइपोथैलेमस का धारक है। हाइपोथैलेमस भावनात्मक तथा मानसिक परिवर्तनों पर हमारी प्रतिक्रियाओं तथा उनके परिणास्वरूप शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव को नियन्त्रण में रखता है। इसलिए स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र की स्थिरता हमारी मानसिक एवं भावनात्मक स्थिरता पर निर्भर रहती है। यह स्थिरता अत्यावश्यक है, क्योंकि स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र हमारी सभी अनिवार्य क्रियाओं को नियन्त्रण में रखता है तथा वातावरण के प्रति हमारी अनैच्छिक प्रतिक्रियाओं का माध्यम बनता है।

अस्थिर एवं कमजोर स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र मनोकायिक रोगों और मानसिक बीमारियों के प्रति अधिक प्रवण होता है। चिन्ता, तनाव, एकाग्रता में विक्षेप, अव्यवस्थित एवं अपरिपूर्ण जीवन-शैली तथा तनाव से बचने की अक्षमता आदि स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र की अस्थिरता के कुछ मूल कारण हैं।

मन को अगर समुद्र के समान माना जाए तो शरीर है भूमि के समान। उनकी परस्पर अन्तर्क्रिया का क्षेत्र है समुद्र-तट। जब मन रूपी समुद्र अशान्त होता है और इसमें तूफान उठता है तो इसकी लहरें तट से टकराकर बड़े-बड़े भूखण्ड उखाड़ ले जाती हैं। मनोकायिक रोगों की प्रक्रिया भी कुछ ऐसी ही है, जिसके परिणामस्वरूप अपच, कब्ज, पेप्टिक अल्सर, दस्त तथा अन्य अनेक छोटे-बड़े रोग उत्पन्न होते हैं।

रोग-प्रक्रिया

चिन्ता को अपच से अल्सर तक पाचन-संस्थान सम्बन्धी समस्त प्रकार के रोगों का कारण माना गया है, तथापि चिन्ता से ये रोग क्यों होते हैं, यह एक विवादास्पद

प्रश्न है। यदि हम ऐसे पशुओं का अवलोकन करें जिनका तन्त्रिका-तन्त्र मनुष्य से मिलता-जुलता है तो शायद इस प्रक्रिया को समझने में आसानी होगी। कुछ पशु तनाव की परिस्थिति में तुरन्त मल-त्याग कर देते हैं। अनुमानत: वे इस प्रकार शरीर के भार को कम कर तनाव का सामना करने के लिए आन्तरिक शक्ति का संचय करते हैं। कुछ जीव, विशेषकर समुद्री घोंघा तो अपनी आँत के निचले भाग का ही परित्याग कर देता है, जो बाद में पुन: विकसित हो जाता है। कुछ विकसित जीवों में चिन्ता और तनाव के परिणामस्वरूप दस्त की शिकायत हो जाती है। यह विशेषकर तनाव की गम्भीर परिस्थिति में होता है जब अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र थक चुका होता है।

जब हम तनावग्रस्त होते हैं तो शरीर सर्वप्रथम अपना वजन कम करना प्रारम्भ कर देता है और निश्चय ही भोजन ग्रहण करने के लिए वह समय अनुकूल नहीं होता। हमें तनाव की स्थिति में भोजन नहीं करना चाहिए। यही वह महत्त्वपूर्ण तथ्य है जिसे अधिकांश लोग नहीं समझ पाते और इसी कारण बीमार पड़ जाते हैं। जब हम तनाव को दूर नहीं कर पाते तो प्रारम्भ में इसके परिणाम पेट की गड़बड़ी, दस्त और कब्ज के रूप में सामने आते हैं, परन्तु बाद में जब हम अपने शरीर द्वारा दी गई चेतावनी और संकेतों को आदतवश नकार देते हैं, तब तनाव गम्भीर असाध्य रोगों में परिणत हो जाते हैं। हमारा आन्तरिक भाव और बाह्य वातावरण मिलकर तनाव की अवस्था उत्पन्न करते हैं, जिसका उपचार बहुत ही कठिन हो जाता है। योग जैसी किसी प्रभावी प्रक्रिया के द्वारा ही उसका उपचार सम्भव होता है। यदि हम ऐसी तनावपूर्ण स्थिति में हैं कि पाचन-संस्थान एवं आँतें मल का त्याग करना चाहती हैं और उस समय भी अगर हम कुछ खाने-पीने में जुटे रहते हैं तो इससे शरीर को गम्भीर क्षति पहुँचती है। लेकिन फिर भी हमारे आधुनिक समाज में यह एक सामान्य प्रवृत्ति बन गई है। अनेक व्यापारी एवं बड़े व्यवसायी तनावपूर्ण अवस्था में ही भोजन करते है। वे कोई बड़ा सौदा तय करने की चिन्ता में लगे जल्दी-जल्दी भोजन करते हैं और पूरे समय अपनी इच्छाओं एवं महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए प्रयासरत रह निरन्तर तनावों से घिरे रहते हैं।

जब तनावपूर्ण अवस्था निरन्तर और अनुपयुक्त तरीके से बनी रहती है, तब पाचन-संस्थान के विभिन्न घटक एक-दूसरे से मुक्त होकर स्वतन्त्र रूप से कार्य करने लगते हैं। विभिन्न अंगों, कोशों तथा उनके कार्यों के बीच तालमेल नहीं रहता। हो सकता है आमाशय अत्यधिक अम्ल का स्राव करने लगे, जबकि उसी समय आँत में किसी अन्य आवश्यक द्रव्य का स्राव अत्यल्प मात्रा में हो। परिणामस्वरूप हमारी पाचन क्षमता घट जाती है।

कुछ पशुओं की शरीर रचना इस तरह की होती है कि वे तनाव को सहज झेल लेते हैं। खरगोश एवं अन्य जुगाली करने वाले पशु इसके उदाहरण हैं। इनके आमाशय का निर्माण कुछ इस तरह हुआ है कि वे उसमें घास का संग्रह कर सकते

हैं। जब वे किसी ऐसे खुले क्षेत्र में घास चरते हैं जहाँ परभक्षी प्राणियों का खतरा हमेशा बना रहता है, उस समय उन्हें हमेशा सतर्क एवं सावधान रहना पड़ता है तथा खतरे का हल्का-सा संकेत मिलते ही भागना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में वे जल्दी-जल्दी पेट में घास भर लेते हैं और बाद में जब वे किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचते हैं तो जुगाली कर भोजन को धीरे-धीरे, स्वाद लेकर अच्छी तरह चबाते हैं। परन्तु मनुष्य के भीतर ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। इसलिए तनावों के मध्य रहते हुए उसे योग जैसी किसी प्रशांतक प्रक्रिया पर आश्रित रहना पड़ता है ताकि आन्तरिक क्रियाकलापों पर उसका नियन्त्रण बना रहे।

समुद्र को शान्त करना

योग हमारे मन के तूफानी, उग्र समुद्र को शान्त करने के लिए सम्भवत: सर्वोत्तम उपाय है। मन की तूफानी लहरों की मनोदैहिक प्रतिक्रियास्वरूप शरीर क्षत-विक्षत हो जाता है। योग तनाव, चिन्ता एवं परेशानी को दूर करने की एक सर्वमान्य विधि है, जो शरीर की आन्तरिक क्रियाओं को अधिक दक्षतापूर्वक कार्य करने में सहयोग देती है। शरीर और मन पर अपने विश्रान्तिदायक प्रभाव द्वारा यह शरीर की क्रियाओं को सुचारु बनाए रखता है। स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र तथा हाइपोथैलेमस जैसे मस्तिष्क के निम्नस्तरीय भागों में सन्तुलन आता है और ये भाग उच्चतर तन्त्रिका-तन्त्रों के साथ समन्वित हो जाते हैं।

अल्पकालिक अभ्यास-कार्यक्रम में शरीर के उपचार हेतु आसन-प्राणायाम उपयोग में लाये जाते हैं, जिनका मन पर भी शान्तिदायक प्रभाव पड़ता है। जब हम शरीर को मजबूत बनाते हैं तो मन अपने आप मजबूत हो जाता है। दीर्घकालिक अभ्यास क्रमावली में शरीर और मन के निष्क्रिय अवयवों को पुन: सक्रिय बनाने और अपनी सजगता के क्षेत्र में लाने हेतु अनेक सरल योगाभ्यासों की आवश्यकता होती है। ध्यान तथा एकाग्रता के अभ्यास इस हेतु उत्तम हैं।

सजगता तथा शिथिलीकरण के अभ्यास द्वारा हम अपने शरीर पर नियन्त्रण रख सकते हैं और उसमें इच्छानुसार परिवर्तन ला सकते हैं। जब हम तनावग्रस्त होंगे तो हमारी सजगता चेतावनी देगी कि इस समय कुछ मत खाओ, बल्कि श्वास की सजगता या ध्यान की किसी विधि द्वारा विश्राम लो। जब हम ध्यान की इन विधियों को अपने दैनिक कार्यक्रम में स्थान देते हैं तो हमारा मन सहज रूप से शान्त रहता है। जैसे-जैसे अन्तर्दृष्टि, विवेक तथा अन्त:प्रज्ञा का विकास होने लगेगा, वैसे-वैसे तनाव उत्पन्न करने वाले अज्ञान और भय मिटते जायेंगे। जब तक यह अवस्था प्राप्त न हो जाए, योग के माध्यम से सतत् सजगता बनाए रखने का प्रयत्न करें। तभी आप भोजन का सही आनन्द उठा पायेंगे और सुन्दर स्वास्थ्य को चिरस्थायी रख पायेंगे।

–'समस्या पेट की, समाधान योग का' पुस्तक से उद्धृत

जीवन में योग का महत्त्व

विशाल सागर सिंह, सबौर

आज के संसार में प्राय: सभी लोग भौतिक सुखों की ओर भाग रहे हैं और सुख की वास्तविक परिभाषा भूलकर मानसिक तथा शारीरिक रूप से पीड़ित हैं। आधुनिक सुख-सुविधा के साधन उन्हें क्षणिक सुख तो दे देते हैं, लेकिन निरन्तर सुख या आत्मिक सुख नहीं दे पाते। ऐसे भौतिक संसार में योगाभ्यास का विशेष महत्त्व है। इससे न केवल शारीरिक आरोग्य मिलता है, बल्कि मानसिक शांति भी प्राप्त होती है।

योगासनों द्वारा रोगों के इलाज के बारे में हम सभी ने सुन या पढ़ रखा है, पर उन बातों को हम अक्सर हंसी में उड़ा देते हैं। सोचते हैं कि जिन रोगों का इलाज ऐलोपैथिक दवाओं से नहीं हो पाता है, बड़े-बड़े डॉक्टर जिसका इलाज नहीं कर पा रहे हैं, उसका इलाज योगासन से कैसे संभव है, जिसमें मात्र अपने शरीर को एक विशेष स्थिति में रखना पड़ता है। हममें से अधिकांश इसे झूठा साबित करने का दावा करते हैं, पर मैं आपको अपनी आपबीती सुनाना चाहता हूँ। पहले मैं भी आपमें से एक था, जो ऐसी बातें हंसी में उड़ा देते हैं।

मेरे जन्म के छ: माह पश्चात् मेरा शरीर अचानक दुबला होने लगा तथा पेट बाहर निकल आया। कई डॉक्टरों को दिखाने पर भी कोई यह स्पष्ट नहीं बता पाया कि मुझे कौन-सा रोग है। जब रोग अपने चरम पर पहुँचा, तब डॉक्टर ने बताया कि यह लीवर की खराबी है। उनका कहना था कि मेरा लीवर गर्भकाल से ही खराब है। काफी लम्बा ईलाज चला। रोग के अन्य लक्षण जैसे उल्टी होना, दस्त हो जाना, खाना न हजम होना इत्यादि तो खत्म हो गए, लेकिन मेरा लीवर

स्वस्थ न हो सका। कोई भी तैलीय या गरिष्ठ भोजन करने पर मुझे पतला दस्त होना आरम्भ हो जाता था। इस बीच मेरा स्वास्थ्य एकदम गिर गया था और मैं स्वभाव का अत्यंत चिड़चिड़ा हो चुका था। छोटी-छोटी बात पर नाराज़ हो जाना मेरा स्वभाव बन चुका था, जिससे मेरे माता-पिता काफी चिन्तित रहा करते थे। लगभग तेरह-चौदह साल तक मेरी यही स्थिति रही। तब तक मैं अपने इस प्रकार के जीवन का आदी हो चुका था। सादा भोजन खाना, उबली सब्जियाँ खाना, तेल-घी से दूर रहना, फिर भी कभी अगर गलती से या धोखे में तेल-घी वाली चीज़ खा ली तो तीन-चार दिनों के लिए बिस्तर पकड़ ही लेता था।

जब मैं लगभग सत्रह वर्ष का था, उस बीच एक दिन मैंने गलती से आठ-दस दाने काजू के खा लिए। अगले दिन से मेरा पेट खराब हो गया। दिन में छह-आठ बार पतला दस्त होने लगा। चूँकि ऐसा मेरे साथ प्राय: हो जाता था, इसलिए मैंने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया, लेकिन चार-पाँच दिन बाद जब डॉक्टर को दिखाया तो पता चला कि मेरे लीवर में सूजन आ गई है। उसे ठीक होने में लगभग तीन-चार माह लग गए। मेरे पिताजी ने जब डॉक्टर से बात की तो उन्होंने कहा कि इस रोग का कोई स्थाई ईलाज नहीं है। इसे सदैव संभल कर रहना पड़ेगा।

संयोगवश उन्हीं दिनों हमारे मौहल्ले में योग शिविर लगा। मेरे पिताजी ने योगाचार्य से बात की तो उन्होंने सुझाव दिया कि आप अपने लड़के को 'बिहार योग विद्यालय, मुंगेर' में भर्ती करवा दें, आपका लड़का अवश्य स्वस्थ हो जाएगा। जब मैंने ऐसा सुना तो काफी हंसा कि जिस रोग का ईलाज बड़े-बड़े डॉक्टर नहीं कर पा रहे हैं, उसका ईलाज उल्टे-सीधे आसन लगाकर कैसे होगा। लेकिन मेरे पिताजी ने मेरी एक न सुनी और मुझे मुंगेर योगाश्रम में भर्ती करवा दिया। वहाँ डेढ़ माह रहने के बाद जब मेरे शिक्षक ने कहा कि अब तुम स्वस्थ हो गए हो तो मैंने उनकी काफी हंसी उड़ाई कि यहां का सात्त्विक भोजन खाकर तो कोई भी स्वस्थ हो जाए, लेकिन बाहर ऐसा भोजन कहाँ मिलेगा?

तब उन्होंने आश्रम में मुझे एक दिन जमकर पूड़ियाँ खिलाईं और कहा, 'देखो, हजम होता है कि नहीं।' सचमुच चमत्कार ही हो गया! मैं इस भोजन को आसानी से हजम कर गया था। इसके बाद से अब तक मैं हर तरह का भोजन करता हूँ और उसे अच्छी तरह हजम कर लेता हूँ। स्वास्थ्य तो ऐसा हो गया है कि अब मुझे डायटिंग भी करनी पड़ती है। कहीं तेल-घी की चीज़ें ज्यादा न खाऊँ, अन्यथा मोटा हो जाऊँगा। मेरा लीवर अब पूर्णतया स्वस्थ है, मेरा चित्त शान्त और स्वभाव विनम्र हो गया है।

आपमें से काफी सज्जन ऐसे भी होंगे जो इसे पढ़कर शायद हंसी में उड़ाने की चेष्टा करें, लेकिन मेरा उनसे विनम्र निवेदन है कि यदि वे वास्तव में किसी बीमारी से पीड़ित हों तो एक बार अवश्य ही योगाभ्यास की शरण में जाएँ। मानसिक शान्ति पाने में भी योग काफी सहयोग करता है।

बाल योग दिवस की अनुपम झाँकी

संन्यासी यौगप्रिया, पटना

राजनाँदगाँव की गलियों में उड़त गुलाल है
माता धर्मशक्ति को हुए नन्द लाल हैं

इस संगीत से सारा गंगा दर्शन आश्रम गुँजायमान हो रहा है। माताएँ झूम रही हैं और बच्चों में उत्साह एवं उमंग हिलोरें ले रहा है। समस्त सत्यम् वाटिका रंग-बिरंगे गुब्बारों और चटकीले फूलों से सुसज्जित है। लाल रंग की पोशाकों में चहकते इन छोटे-छोटे बच्चों से पूरी वाटिका गूँज रही है, और हो भी क्यों न? 14 फरवरी को, जिसे सारी दुनिया प्रेम-दिवस के रूप में मनाती है, हमारे लल्ला, स्वामी निरंजन जी का अवतरण हुआ है। प्रेम दिवस की अभिव्यक्ति तो मात्र दो प्राणियों के बीच होती है—चाहे प्रेमी-प्रेमिका हो, पति-पत्नी, या फिर जिनसे हमारा आत्मिक सम्बन्ध हो। पर स्वामीजी ने अपने जन्मदिवस को 'बाल योग दिवस' का स्वरूप देकर व्यापक बना दिया है जिसे बाल योग मित्र मण्डल के बच्चे एक बृहत् उत्सव के रूप में मनाते हैं।

स्वामीजी ने बीस साल पहले सात बच्चों को लेकर जो मण्डली बनायी थी, आज उस परिवार में हजारों बच्चों का योगदान है। इस मण्डली का उद्देश्य बच्चों को स्वावलम्बी, संस्कारी तथा प्रतिभावान् बनाना है। आश्रम में कला-संगीत का प्रशिक्षण देकर इनकी प्रतिभा को निखारने का प्रयास किया जा रहा है और साथ ही भारतीय संस्कारों से पोषित किया जा रहा है। स्वामीजी के हृदय से निकली इस योग रूपी प्रेमगंगा में ये बच्चे डुबकी लगाते हैं और अपनी प्रतिभाओं को जागृत कर समाज में नवजीवन का संचार कर रहे हैं। ये बच्चे आश्रम के सभी समारोहों का संचालन बड़ी निपुणता के साथ करते हैं। इसका आधार इनकी श्रद्धा और आस्था ही है।

बाल योग दिवस के समारोह का आयोजन इन बच्चों की रचनात्मकता एवं दूरदर्शिता का प्रतीक है। इस साल इसमें डाँस एवं ड्रामा के द्वारा स्वामी निरंजन जी के बाल्यकाल को दर्शाया गया। स्वामीजी की जीवनी में उन तमाम शिक्षाओं का समावेश है जो उन्हें अपने गुरु, स्वामी सत्यानन्द जी से मिलीं। बच्चों के उत्कृष्ट प्रदर्शन ने यह सोचने पर विवश कर दिया कि स्वामी निरंजन जी के जीवन की छोटी-से-छोटी घटनाओं का प्रभाव भी इनके कोमल हृदय पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाता है और इसी को वे संस्कार रूप में अपने जीवन में आत्मसात् कर रहे हैं।

बाल योग दिवस के दिन ये बच्चे पूरे वर्ष की अपनी उपलब्धियों को स्वामीजी के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इन्हें प्रोत्साहित करने के लिए अपनी-अपनी गुणवत्ता के अनुसार इन्हें पुरस्कृत भी किया जाता है तथा भविष्य के लिए योजनाएँ भी निर्धारित की जाती हैं। इस विशेष दिन का इन्तजार बच्चों के साथ-साथ उनके माता-पिता भी करते हैं। वे सभी इस समारोह में सम्मिलित होकर अपने बच्चों की कुशलता से गौरवान्वित महसूस करते हैं। बच्चे, अभिभावक, आश्रम के अन्तेवासी, विद्यार्थी, कर्मचारी तथा मेहमानों के बीच घिरे स्वामीजी अपने ही बाल्य काल की लीलाओं को बड़ी कौतुकता से देखते हैं और चेहरे पर मन्द-मन्द मुस्कान छा जाती है–

बच्चों के संग बच्चा, बन जाते अलख निरंजन
अपने बचपन की घटनाएँ, सुनते हैं परम निरंजन
मन्द-मन्द मुस्काता चेहरा, कौतुक भरी निगाहें
आत्म विभोर कर जातीं सबको हँसते और हँसाते।
प्रसन्नता के आलोक में, मुस्कान सदा यह बनी रहे
श्रीचरणों में नतमस्तक हो जीवन हमारा सुफल रहे॥

योग विद्या का ज्योति पर्व

ज्योति मन्दिर में धूम मची है
ज्योति से ज्योति उपजी है
संकल्प गुरुजनों का गह कर,
तेजोमय उष्णता लेकर,
स्वयं ज्योति मुग्धता लगती है।

वे चलीं मधुर नर्तन करतीं,
इठलाती हैं नव बाला सी
दृढ़ संकल्पों के मध्य,
दरश देती हैं यौगिक माता सी।

वे आन विराजीं छाया समाधि
जो बड़े गुरु का डेरा है,
चहुँ ओर हर्ष ध्वनि उठती है,
और गूंज गगन तक जाती है,
जनगण इस दिव्य क्षण के
साक्षी बन गर्वित होते हैं।

प्रकाश पदम में स्थापित हो,
नवज्योति राह दिखलाती है
योग विद्या का केन्द्र बिन्दु बन,
प्रकाश स्तम्भ बन जाती है,
प्रेरणा स्तम्भ बन जाती है,
ज्योति पर्व बन जाती है।

– संन्यासी आत्मकीर्ति, रांची

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

सत्यम् गाथा–मैं संन्यासी हूँ

पृष्ठ 24

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती तथा श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को समर्पित सत्यम् गाथाएँ उनकी आध्यात्मिक एवं यौगिक शिक्षाओं को सरल, रोचक ढंग से दुनियाभर के लोगों तक पहुँचाने का माध्यम हैं।

एक तेजस्वी संन्यासी से अनायास भेंट एक युवा महिला के मन में प्रेरणा और दृढ़ संकल्पशक्ति का बीजारोपण कर देती है। कालान्तर में वह बीज अंकुरित होकर उस महिला को सामाजिक कुप्रथाओं एवं बन्धनों का विरोध कर नि:स्वार्थ सेवा के मार्ग पर अकेले आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। जीवन की टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से गुजरती वह साधिका अंतत: उन संन्यासी को गुरु रूप में स्वीकार कर, स्वयं को संन्यास मार्ग पर समर्पित कर देती है।

नया प्रकाशन

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें–
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 91-6344-222430, 6344-228603 फैक्स : 91-6344-220169

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा।

वेबसाइट

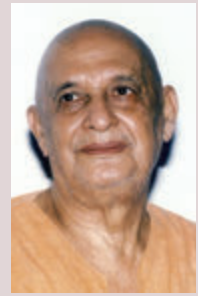

www.biharyoga.net

यह बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट है जिसमें सत्यानन्द योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट सम्बन्धी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

www.yogamag.net

योगा पत्रिका की वेबसाइट पर पिछले तीस वर्षों की प्रतियों का संग्रह है। इस निरंतर वर्धमान संग्रह में खोजने की सुविधा भी उपलब्ध है।

आवाहन वेबसाइट

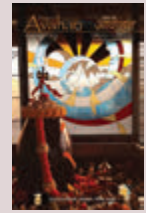

www.biharyoga.net/sannyasa-peeth/avahan/ पर संन्यास पीठ की द्वैमासिक पत्रिका, *सत्य का आवाहन* उपलब्ध है, जिसमें श्री स्वामी शिवानन्द, श्री स्वामी सत्यानन्द एवं स्वामी निरंजनानन्द की शिक्षाओं तथा संन्यास पीठ की गतिविधियों की जानकारी है।

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. HR/FBD/298/16-18
  Office of posting: BPC Faridabad
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

bar code

योगपीठ के कार्यक्रम एवं प्रशिक्षण 2016

अप्रैल 24-30	योग कैप्सूल-पाचन सम्बन्धी (हिन्दी)
जुलाई 15-18	गुरु पूर्णिमा सत्संग कार्यक्रम (हिन्दी/अंग्रेजी)
जुलाई 19	गुरु पादुका पूजन
अगस्त 1-30	योग अनुदेशक सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी-भारतीयों के लिए)
सितम्बर 24-30	हठ योग-षट्कर्मों का विशेष सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी)
अक्टूबर 1-30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण (अँग्रेजी)
अक्टूबर 3- जनवरी 29	चातुर्मासिक योग अध्ययन सत्र (अंग्रेजी)
अक्टूबर 22-28	राज योग-आसन-प्राणायाम का विशेष सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी)
नवम्बर 5-11	क्रिया योग-प्रारम्भिक (हिन्दी/अंग्रेजी)
नवम्बर 7- फरवरी 7	यौगिक जीवनशैली का अनुभव (अंग्रेजी)
दिसम्बर 19-23	योग चक्र की तृतीय शृंखला (हिन्दी/अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 5 एवं 6 तारीख	श्री स्वामी सत्यानन्द जी की महासमाधि का स्मरणोत्सव
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

आश्रम में मोबाइल फोन लाना वर्जित है। अपना मोबाइल फोन कदापि अपने साथ न लाएँ।

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें-

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

फोन : 06344-222430, 06344-228603 फैक्स : 06344-220169

वेबसाइट : www.biharyoga.net

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।